Con. 3. IX.15.49
320

अंक 9
संख्या 15

सोमवार
22 अगस्त
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का प्रारूप—*(जारी)*
[अनुच्छेद 284, 285, 285क, 285ख
और 285ग पर विचार] ..... 829-890 से 902

भारतीय संविधान सभा

सोमवार, 22 अगस्त, 1949

भारतीय संविधान-सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली, में प्रातः 9 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का प्रारूप—*जारी*

अनुच्छेद 284

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं आज हमें अनुच्छेद 284 से आरम्भ करना है। प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 284 संविधान का अंग बने।"

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई: जनरल): महोदय मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 284 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाये:—

'284. (1) Subject to the provisions of this article, there shall be a Public Service Commission for the Union and a Public Service Commission for each State.

(2) Two or more States may agree that there shall be one Public Service Commission for that group of States, and if a resolution to the effect, is passed by the House or, where there are two Houses, by each House of the Legislature of each of those States, Parliament may be law provide for the appointment of a Joint Public Service Commission (referred to in this Chapter as Joint Commssion) to serve the needs of those States.

(2a) Any such law as aforesaid may contain sucy incidental and consequential provisions as may appear necessary or desirable for giving effect to the purposes of clause (2) of this article.

(3) The Public Service Commission for the Union, if requested so to do by the Governor or Ruler of a State, may, with the approval of the President agree to serve all or any of the needs of the State.

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(4) References in this Constitution to the Union Public Service Commission or a State Public Service Commission shall, unless the context otherwise requires, be construed as references to the Commission serving the needs of the Union or, as the case may be, the State as respects the particular matter in question.'

'284. (1) इस अनुच्छेद के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, संघ के लिए एक लोक सेवा आयोग और प्रत्येक राज्य के लिए एक लोक सेवा आयोग होगा।

(2) दो या अधिक राज्य यह करार कर सकेंगे कि राज्यों के उस समूह के लिए एक ही लोक सेवा आयोग होगा तथा, यदि उस उद्देश्य का संकल्प उन राज्यों में से प्रत्येक के विधान-मंडल के सदन द्वारा अथवा जहां दो सदन हैं, वहां प्रत्येक सदन द्वारा पारित कर दिया जाता है तो, संसद उन राज्यों की आवश्यकता की पूर्ति के लिये विधि द्वारा संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग (जो इस अध्याय में "संयुक्त आयोग" के नाम से निर्दिष्ट है) की नियुक्ति का उपबन्ध कर सकेगी।

(2क) उपरोक्त विधि में ऐसे प्रासंगिक तथा आनुषंगिक उपबन्ध भी अंतर्विष्ट हो सकेंगे जैसे कि इस अनुच्छेद के खंड 2 के प्रयोजनों को सिद्ध करने के लिये आवश्यक या वांछनीय हों।

(3) यदि किसी राज्य का राज्यपाल या शासक, संघ के लोक सेवा आयोग से ऐसा करने की प्रार्थना करे तो, राष्ट्रपति के अनुमोदन से, वह उस राज्य की सब या किन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये कार्य करना स्वीकार कर सकेगा।

(4) यदि प्रसंग से अन्यथा अपेक्षित न हो, तो इस संविधान में संघ के लोक सेवा आयोग अथवा किसी राज्य के लोक सेवा आयोग के निर्देशों को ऐसे आयोग के प्रति निर्देश समझा जायेगा जो प्रश्नास्पद किसी विशेष विषय के बारे में यथास्थिति संघ की अथवा राज्य की आवश्यकताओं की पूर्ति करता हो।"

यह अनुच्छेद स्वत: स्पष्ट है और मेरे विचार से इस अनुच्छेद में किसी मुद्दे को स्पष्ट करने के लिये किसी टिप्पणी की आवश्यकता नहीं है। अत: जब इस अनुच्छेद की सम्भावित आलोचना का उत्तर देने का अवसर आयेगा तभी मैं अपने विचार व्यक्त करूंगा।

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू** (उड़ीसा: जनरल): महोदय, क्या मैं पूछ सकता हूं कि संसद द्वारा कोई विधि बनाये जाने का उपबन्ध रखे जाने की आवश्यकता है और इन उपबन्धों में शासक (रुलर) शब्द का क्यों उल्लेख किया गया है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** यदि मैं अपने मित्र श्री साहू की बात से समझ सका हूं तो वह यहां यह जानना चाहते हैं कि हमने संसद द्वारा विधि

बनाये जाने का उपबन्ध क्यों रखा है। वह इस बात को समझते होंगे कि मूल सिद्धांत यह है कि प्रत्येक राज्य का अपना-अपना लोक सेवा आयोग होना चाहिए। परन्तु यदि प्रशासनिक अथवा वित्तीय कारणों से प्रत्येक राज्य के लिये अपना-अपना आयोग गठित करना सम्भव न हो तो दो राज्य एक संकल्प पारित करके केन्द्र को यह शक्ति प्रदान कर सकते हैं कि ऐसे दोनों राज्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये वह एक संयुक्त क्षेत्रीय आयोग गठित करने की व्यवस्था करे जो कि, जैसा कि मैंने पहले कहा है, प्रशासनिक अथवा वित्तीय कारणों से अपने लिये पृथक स्वतन्त्र आयोग गठित करने की स्थिति में नहीं है। स्पष्ट है कि जब इस आशय की शक्ति केन्द्र को दी जाती है तो यह अनिवार्य हो जाता है कि वह संसद द्वारा बनायी गयी विधि द्वारा विनियमित की जानी चाहिए और राष्ट्रपति को यह शक्ति नहीं होनी चाहिये कि वह केवल कार्यकारी आदेश जारी करके ही दो राज्यों के लिये संयुक्त आयोग गठित कर सके। इसी प्रयोजन से किसी आयोग के, जिसे दो राज्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करनी है, गठन को विनियमित करने के लिये संसद को शक्ति दी गयी है।

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू:** दूसरी बात यह थी कि शासक शब्द का उल्लेख क्यों किया गया?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** क्योंकि यह सम्भव है कि भाग 3 का कोई राज्य अपने लिये एक पृथक लोक सेवा आयोग गठित करना अनावश्यक समझे। ऐसी स्थिति में भाग 3 के किसी राज्य के लिये, यदि वह राज्य भाग 1 के किसी राज्य के साथ सहमत है, राष्ट्रपति से इस आशय का अनुरोध किये जाने का मार्ग बन्द नहीं होना चाहिए कि उनके लिये एक संयुक्त आयोग गठित किया जाये। इसी कारण से इस अनुच्छेद के उपबन्धों में शासक शब्द रखा गया है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): मैं एक स्पष्टीकरण चाहता हूं। खंड 3 में यह कहा गया है कि "राष्ट्रपति के अनुमोदन से वह उस राज्य की सब या किन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये कार्य करना स्वीकार कर सकेगा"। क्या मैं जान सकता हूं कि यदि कोई स्थानीय निकाय लोक सेवा आयोग की सेवा का लाभ उठाना चाहे तो क्या इसको अनुमति दी जायेगी?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** जी हां। इसके लिये एक पृथक अनुच्छेद है जिसमें इस आशय का उपबन्ध किया गया है कि यदि कोई स्थानीय प्राधिकरण यह चाहे कि लोक सेवा आयोग उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करे, तो संसद लोक सेवा आयोग को यह अधिकार प्रदान कर सकती है कि वह ऐसे स्थानीय प्राधिकरण की आवश्यकताओं की पूर्ति करे।

(संशोधन संख्या 2 प्रस्तुत नहीं किया गया।)

***अध्यक्ष:** मैं मान लेता हूं कि मूल अनुच्छेद से सम्बन्धित अन्य संशोधनों का अब प्रश्न नहीं उठता। क्या कोई माननीय सदस्य कोई अन्य संशोधन प्रस्तुत करना चाहते हैं?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिम बंगाल: मुस्लिम): मुझे इस खंड के सम्बन्ध में तीन संशोधन प्रस्तुत करने हैं। पहले संशोधन के संबंध में मैं समझता हूं कि यदि इसे स्वीकार कर लिया गया तो प्रारूप में कुछ विसंगति पैदा हो जायेगी। इसलिये मैं इसको भिन्न रूप में प्रस्तुत करने के लिये आपकी अनुमति चाहता हूं। मुझे इस बात में कोई सन्देह नहीं कि मेरा संशोधन चाहे वह कितना ही युक्तिसंगत क्यों न हो सभा द्वारा कदापि स्वीकार नहीं किया जायेगा। इसलिए मैं इसको अधिक

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

उपयुक्त रूप में प्रस्तुत करने के लिये आपकी अनुमति चाहता हूं। यद्यपि सभा द्वारा इसे स्वीकार किये जाने की मुझे कोई आशा नहीं है। अतः यदि आप मुझे इसको थोड़ा सा परिवर्तित रूप में प्रस्तुत करने की अनुमति दें तो मेरे विचार में इसकी रचना बेहतर हो जायेगी। मैं इसमें समय पर सुधार नहीं कर सका क्योंकि अनेक संशोधन एक साथ आये थे जैसे अचानक कोई हवाई हमला होता है, और उनको समय पर तैयार कर सकना असम्भव था।

***अध्यक्षः** वे तो एक सप्ताह पूर्व परिचालित किये गये थे।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** यद्यपि ये संशोधन गत सप्ताह परिचालित किये गये थे, तो भी सभा के समक्ष बड़ी संख्या में असमंजसकारी अनेक विषय आ रहे हैं और उनके साथ तीव्र गति से चल सकना बहुत कठिन है। जब प्रारूप समिति निर्णय करने में दो महीनों का समय ले लेती है तब हमसे इतनी बड़ी संख्या में नये संशोधनों के साथ तत्काल निपटने की आशा कैसे की जा सकती है; मैं कुछ विलम्ब करने का दोषी अवश्य हूं। इसलिये मैं आपकी विशेष अनुमति चाहता हूं।

***अध्यक्षः** अच्छा ठीक है आप उन्हें प्रस्तुत कर सकते हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 284 में, खंड (2) के स्थान पर यह खंड रखा जाये:—

(2) Two or more States may by Resolution in their Legislative Assemblies or where there are two Houses, in both the Houses, agree that there shall be one Public Service Commission for that group of States."

'(2) दो अथवा अधिक राज्य अपनी विधान सभाओं में अथवा जहां दो सदन हैं वहां दोनों सदनों में, संकल्प पारित करके करार कर सकेंगे कि राज्यों के उस समूह के लिये एक ही लोक सेवा आयोग होगा।'

मैं चाहता था कि इस खंड के बाद का भाग का लोप कर दिया जाये परन्तु ऐसा करने से प्रारूप की रचना भद्दी हो जाती इसलिये मैंने संशोधन को इस रूप में प्रस्तुत किया है। सार रूप में पहले प्रस्तुत और अब प्रस्तुत किये गये संशोधन के बीच कोई अंतर नहीं है।

महोदय, मैं यह भी प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधनों में संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 284 के खंड 2(क) में, 'law (विधि)' शब्द के स्थान पर 'agreement (करार)' शब्द रखा जाये।"

---

* इस चिन्ह का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

मैं यह भी प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधनों में संशोधनों की सूची संख्या 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 284 के खंड (3) में, 'or Ruler' (अथवा शासक)' शब्दों को निकाल दिया जाये।"

मेरे पहले संशोधन का प्रयोजन यह है कि प्रारूप संविधान में रखे गये मूल अनुच्छेद में, इस खंड का सार यह था कि दो या दो से अधिक राज्य परस्पर करार करके एक साझा लोक सेवा आयोग गठित करने का निर्णय कर सकेंगे। अब करार के आधार को समाप्त कर दिया गया है। वास्तव में दो या दो से अधिक राज्यों के लिये, उनके विधानमंडलों द्वारा संकल्प पारित करके व्यक्त की गयी सहमति के आधार पर संयुक्त लोक सेवा आयोग गठित करने की शक्ति संसद को दी जा रही है। यह प्रान्तीय मामलों में हस्तक्षेप करने का एक अन्य उदाहरण है। यह नितान्त अनावश्यक है। मेरे संशोधन से कुछ थोड़े-बहुत परिवर्तन के साथ वही स्थिति रहेगी जो मूल प्रारूप अनुच्छेद में थी, उसमें एक परन्तुक यह होगा कि राज्यों का करार उनके विधानमंडलों में पारित संकल्पों पर आधारित होगा। मेरे संशोधन का उद्देश्य यह है कि जहां तक संयुक्त लोक सेवा आयोग की नियुक्ति का संबंध है, भाग-1 के राज्यों को अपने मामले तय करने के लिये सक्षम बनाया जाना चाहिये। यह केवल दो राज्यों के बीच का मामला होगा और संबंधित पक्षों के बीच करार का मामला होगा। इस मामले में संसद का हस्तक्षेप करने का कोई औचित्य नहीं है। हमें प्रान्तों को अपने आप काम करने देना चाहिये; वे परस्पर लाभ अथवा हानि पर विचार करें और फिर संयुक्त लोक सेवा आयोग की नियुक्ति पर सहमत हों। उन्हें खंड 2(क) के अधीन आनुषंगिक मामलों, जैसे वेतन, छुट्टी तथा विभिन्न अनेक छोटे-छोटे मामलों पर सहमत होने की शक्ति प्राप्त होगी। मेरे विचार में प्रारूप संविधान में प्रान्तों को दी गयी उचित शक्तियों को जानबूझकर समाप्त करने का अथवा उनसे वंचित करने का यह एक प्रयास है। मैं सभा का ध्यान एक अन्य नये अनुच्छेद 287 की ओर दिलाना चाहूंगा। यह अनुच्छेद मुद्रित सूची के पृष्ठ 9 पर दिया है। इस नये अनुच्छेद में मूल अनुच्छेद में सम्मिलित परन्तुक को पूरी तरह से निकाल दिया गया है। परन्तुक इस प्रकार था:

"परन्तु जहां किसी के विधानमंडल द्वारा कोई अधिनियम पारित किया गया है, अधिनियम की एक शर्त यह होगी कि इससे सम्बन्धित कृत्य राष्ट्रपति की सहमति के बिना किसी ऐसे व्यक्ति के सम्बन्ध में प्रयोज्य नहीं होगा जो राज्य की किसी सेवा का सदस्य नहीं होगा।"

महोदय, मूल अनुच्छेद 287 के इस परन्तुक से राज्य विधान मंडलों को लोक सेवा आयोगों के संबंध में विधि बनाने की शक्ति प्राप्त होती थी। प्रस्तावित नये अनुच्छेद 287 में यह शक्ति समाप्त कर दी गयी है।

फिर इस नीति का अनुसरण करते हुए, विचाराधीन नये अनुच्छेद, अर्थात अनुच्छेद 284 में राज्यों को कानून बनाने की वैवेकिक शक्ति का अधिलंघन करने की शक्ति संसद को दी गयी है। वर्तमान अनुच्छेद के खंड (2) में संसद द्वारा विधि बनाये जाने के उपबन्ध से और पहले के अनुच्छेद 287 के परन्तुक के हटाये जाने से यह पता चलता है कि राज्यों के मामले में यथासम्भव अधिक से अधिक हस्तक्षेप

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

करने की एक सुनियोजित नीति का अनुसरण किया जा रहा है। प्रत्येक चरण पर हस्तक्षेप किये जाने का प्रभाव यह होगा कि प्रान्त शक्तिहीन रह जायेंगे। इसका परिणाम यह होगा कि कुछ प्रान्तों में बड़े पैमाने पर जो अक्षमता, भ्रष्टाचार और असन्तोष व्याप्त है, उसमें कोई कमी नहीं आयेगी बल्कि मैं कहूंगा कि इनमें वृद्धि ही होगी। संसद को यह शक्ति देने का अर्थ होगा प्रान्तों को कोई शक्ति दिये बिना उन पर जिम्मेदारी डालना। प्रान्तों में अच्छे प्रशासन का उत्तरदायित्व प्रान्तों पर होगा, परन्तु वित्तीय, विधिक, विधायी तथा अन्य शक्तियां केन्द्र को दी जा रही हैं। वित्तीय शक्तियों के संबंध में जो स्थिति है वह हम जानते ही हैं। इन सब बातों का प्रभाव यह होगा कि प्रान्तों में असन्तोष उत्तरोत्तर बढ़ता ही जायेगा और गैर-जिम्मेदारी की भावना को बल मिलेगा और अकार्यकुशलता बढ़ेगी। मैं इस विषय पर अब इससे अधिक और कुछ नहीं कहना चाहता सिवाय इसके कि मैं यह व्यवस्था किये जाने के विरुद्ध विनम्र भाव से अपना रोष व्यक्त करता हूं।

जहां तक मेरे संशोधन संख्या 65 का सम्बन्ध है, उसमें कहा गया है कि प्रस्तावित अनुच्छेद 284 के खंड (2क) में "विधि" शब्द के स्थान पर "करार" शब्द रखा जाये। यह मेरे पहले संशोधन का ही परिणाम है। मैं पहले रखे गये अनुच्छेद की मूल व्यवस्था से सहमत हूं कि समूचे मामले का समाधान करार के माध्यम से होना चाहिये, संसदीय विधि द्वारा नहीं, चाहे समाधान प्रान्तीय विधि बनाकर हो। इसलिये खंड (2क) में "विधि" शब्द जिसका स्पष्ट तात्पर्य संसदीय विधि से है, के स्थान पर "करार" शब्द रखा जाना चाहिये। यह मेरे पहले संशोधन के परिणामस्वरूप है और मूल अनुच्छेद में की गयी व्यवस्था के अनुरूप है।

अब मैं अपने संशोधन संख्या 66 पर आता हूं। इसमें सिद्धांत संबंधी कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न और प्रारुपण संबंधी कुछ गम्भीर प्रश्न उठाये गये हैं। इस संशोधन में कहा गया है कि प्रस्तावित अनुच्छेद 284 के खंड (3) से "अथवा शासक" शब्द निकाल दिये जायें। ये दो शब्द "अथवा शासक" प्रस्तावित नये अनुच्छेद 284 में सम्मिलित किये गये हैं। यह कहा गया है कि यदि किसी राज्य का राज्यपाल अथवा शासक संघ लोक सेवा आयोग से ऐसा करने का अनुरोध करता है तो वह उस राज्य की सभी या किन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये कार्य करना स्वीकार कर सकेगा। महोदय, मेरा निवेदन यह है कि महत्वहीन दिखाई देने वाले ये दो शब्द "अथवा शासक" समूची स्थिति को ही बदल देंगे। इन दो शब्दों के जोड़े जाने से देशी राज्य भी इसकी परिधि में आ आयेंगे, अथवा यह कहिये कि यह इसी दिशा में किया जा रहा प्रयास है। परन्तु मेरे विचार से इससे भ्रम ही पैदा होगा और अनावश्यक पेचीदगियां पैदा होंगी। यह अनुच्छेद प्रारूप संविधान के भाग 12 में है। अनुच्छेद 281 में "राज्य" की परिभाषा दी गयी है। और कहा गया है कि इस भाग में जब तक कि संदर्भ में अन्यथा अपेक्षित न हो, "राज्य" शब्द का अर्थ फिलहाल एक ऐसा राज्य है जिसका उल्लेख प्रथम अनुसूची के भाग-1 में किया गया है, जिसका अर्थ है प्रान्त। मेरा निवेदन यह है कि भाग 12 पर ध्यानपूर्वक विचार करने से स्पष्ट हो जायेगा कि इस भाग में केवल प्रान्तों के प्रयोजन के लिए ही व्यवस्था की गयी है। इस भाग में शासक शब्द सम्मिलित किये जाने का विचार अनुच्छेद के सन्दर्भ से बिल्कुल मेल नहीं खाता। मेरा निवेदन यह है कि यदि हम "अथवा शासक" शब्दों को इसमें जोड़ते हैं तो इससे भ्रम पैदा होगा। "राज्य" शब्द का अर्थ प्रान्त ही है न कि देशी राज्य। व्यावृत्ति खंड

"..... जब तक कि संदर्भ में अन्यथा अपेक्षित न हो" जोड़ने से भी स्थिति में सुधार नहीं होगा। ये तो सावधानी के साधारण शब्द हैं। वे अनुच्छेद में निहित भाव को अभिव्यक्त नहीं करते। यदि हमने "शासक" शब्द का प्रयोग करना भी है तो अनुच्छेद की पूरी रचना को परिवर्तित करना होगा। इममें की गयी व्यवस्था में नयी-नयी बातें जोड़कर प्रतिदिन सुधार करने की प्रवृत्ति परिलक्षित होती है। यदि हम देशी राज्य की संकल्पना इसमें जोड़ते तो इस बात का पता लगाना अत्यन्त कठिन हो जायेगा कि क्या इस भाग में अन्य स्थानों पर आये "राज्य" शब्द का प्रयोग देशी राज्यों की संकल्पना को ध्यान में रखकर किया गया है। बड़े-बड़े प्रशिक्षित वकीलों तथा अनुभवी न्यायाधीशों के लिए भी यह कहना कठिन होगा कि क्या प्रत्येक मामले में "राज्य" शब्द में अनुसूची में भाग-3 में उल्लिखित राज्य का का भाव भी निहित है। "अथवा शासक" शब्द केवल कुछ ही अनुच्छेदों में यत्र-तत्र रखे गये हैं। प्रश्न यह है कि क्या समूचे भाग 12 में "राज्य" शब्द में देशी राज्यों का भाव भी निहित है? इस कठिनाई का समाधान इस प्रकार नहीं हो सकता, और जैसा कि मैंने पहले कहा है, इससे और भी अधिक भ्रान्ति पैदा होगी। यदि देशी राज्यों को इस व्यवस्था में सम्मिलित करना है तो इस प्रयोजन को सिद्ध करने के लिये समूचे अध्याय का प्रारूप फिर से तैयार करना होगा। यह काम केवल कुछ अनुच्छेदों में "अथवा शासक" शब्दों को यत्र-तत्र अन्तर्विष्ट कर देने से नहीं हो सकता।

तकनीकी कठिनाई और भ्रांति पैदा होने के खतरे के अतिरिक्त इस व्यवस्था में देशी राज्यों को सम्मिलित करने पर एक अन्य आपत्ति भी है। मैं समझता हूं कि देशी राज्य स्वयं अपने संविधान की रचना करने जा रहे हैं और यह पहले से ज्ञात है कि वे संविधान सभा को उनके लिये संविधान का प्रारूप तैयार करते हुए प्रेरित करने का प्रयास कर रहे हैं। यदि ऐसा है तो इसी सभा द्वारा पर्याप्त विधान के माध्यम से राज्यों के समूचे विषय पर पूर्ण रूप से विचार किये जाने की संभावना है। अत: यदि देशी राज्यों को इस व्यवस्था में सम्मिलित करना आवश्यक है तो उसकी व्यवस्था उनके ही प्रारूप संविधान में करना उचित होगा; यत्र-तत्र, अधमने ढंग से और जल्दबाजी में यहां वहां शब्दों को जोड़ने से बात नहीं बन सकती। इस प्रयास मात्र से ही विचार में कुछ परिवर्तन व भ्रान्ति का आभास मिलता है। शब्दों को यहां-तहां जोड़ दिया गया है जिससे निश्चय ही बहुत कठिनाई पैदा होगी। इसलिए मेरा निवेदन यह है कि हमें या तो राज्यों के विषय को छेड़ना नहीं चाहिये या सभी उपबन्धों का प्रारूप फिर से तैयार करना चाहिये। हमें इस विषय को राज्यों पर अथवा उनकी ओर से कार्य करने वाली संविधान सभा पर, जब वह इन राज्यों के लिये संविधान बनायेगी, छोड़ देना चाहिये। इन परिस्थितियों में "अथवा शासक" शब्दों को निकाल देना बेहतर होगा जिससे स्थिति स्पष्ट हो जायेगी और संविधान सभा गुण-दोषों के आधार पर इस विषय से निपट सकेगी। तथापि, मेरा यह आशय नहीं है कि शासकों को अधिशासित करने के लिये कोई कानून नहीं होना चाहिये अथवा किसी देशी राज्य और किसी प्रान्त के बीच संयुक्त लोक सेवा आयोग नियुक्त करने के लिये कोई व्यवस्था नहीं होनी चाहिये। परन्तु मेरा विचार यह है कि स्थिति में सुधार करने हेतु "अथवा शासक" शब्दों को जोड़कर दिये जाने वाले अधमने प्रयास से अनुच्छेदों की व्यवस्था बिगड़ ही जायेगी और उसमें और अनेक मामलों में पेचीदगियां पैदा हो जायेंगी। यदि देशी राज्यों के संविधान पर विचार करते समय यह आवश्यक समझा जाये कि इस प्रकार का अनुच्छेद अत्यावश्यक है तो उपयुक्त अवसर पर संविधान सभा उसे जोड़ सकती

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

है जबकि देशी राज्यों के संविधान का समूचा चित्र हमारे सामने होगा। मेरे विचार में इन शब्दों को इस समय निकाल देना चाहिये और इस प्रश्न के बारे में कोई पूर्वधारणा नहीं बनायी जानी चाहिये कि देशी राज्य भी इस मामले से सम्बन्धित हैं। मैं समझता हूं कि इन खंडों में निरन्तर किये जाने वाले परिवर्तनों से इस सभा में आये दिन भारी कठिनाई पैदा होती है। केवल मैं ही इस कठिनाई को अनुभव नहीं कर रहा हूं वरन् ऐसे बहुत से माननीय सदस्य हैं, जो गम्भीर प्रवृत्ति से कार्य करते हैं, जो इन संशोधनों अथवा परिवर्तनों या उनके आशयों को समझ नहीं पाते।

मेरा निवेदन यह है कि इस सभा के प्रति वर्ममान ढंग की अपेक्षा और अधिक सम्मान दिखाया जाना चाहिये।

***अध्यक्ष:** आज प्रात: लगभग 9.15 पर मुझे दो संशोधनों की सूचना मिली है। मैं कह नहीं सकता कि वे मान्य हैं या नहीं। निश्चय ही वे निर्धारित समय के बाद प्राप्त हुये हैं। परन्तु वे चूंकि कुछ खंडों का—डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव के खंड (2) व खंड (2क) का—लोप चाहते हैं, अत: वे वास्तव में संशोधन नहीं कहे जा सकते। यदि माननीय सदस्य चाहें तो मैं उन दो अनुच्छेदों को अलग से मतदान के लिये रख सकता हूं और यदि वे चाहें तो उनमें से प्रत्येक के विरुद्ध मत दे सकते हैं। क्या कोई माननीय सदस्य मुद्रित संशोधन प्रस्तुत करना चाहते हैं?

***श्री जी.एस. गुहा** (त्रिपुरा, मणिपुर और खासी राज्य): मेरा एक संशोधन संख्या 3052 था।

***अध्यक्ष:** क्या आप उसे प्रस्तुत करना चाहते हैं?

***श्री बृजेश्वर प्रसाद** (बिहार: जनरल): मैं अनुच्छेद 284 का आम तौर पर समर्थन करता हूं। इसके साथ ही मैं सभा का ध्यान कुछ ऐसी बातों की ओर आकर्षित करना चाहूंगा जिनसे मैं सहमत नहीं हूं।

खंड (1) में कहा गया है कि एक लोक सेवा आयोग के लिये होगा और एक लोक सेवा आयोग प्रत्येक राज्य के लिए होगा। मैं इस खंड के दूसरे भाग में सहमत नहीं हूं। मैं चाहता हूं कि देश में प्रशासनिक एकरूपता हो। मैं प्राचीन सिविल सेवा बनाने के पक्ष में नहीं हूं। मैं चाहता हूं कि सेवाओं के सभी अधिकारी भारत सरकार के कर्मचारी हों, केवल भारत सरकार के ही ताकि प्रान्तीय स्वायत्ता की बात बहुत हद तक सीमित रहे। महोदय, हमारा यह अनुभव रहा है कि प्रान्तीय लोक सेवा आयोग के सदस्य प्रान्तीय सरकारों में भ्रष्टाचार, अकुशलता और भाई-भतीजावाद रोकने में असमर्थ रहे हैं। इसलिये मैं खंड (1) के दूसरे भाग का जोरदार विरोध करता हूं, जिसमें प्रत्येक राज्य के लिये लोक सेवा आयोग गठित करने की व्यवस्था की गयी है मैं राज्य आयोगों के विरुद्ध हूं।

खंड (2) में संयुक्त आयोग गठित करने के लिये अपनाई जाने वाली प्रक्रिया

से भी मैं सहमत नहीं हूं। मुझे इस बात का कोई औचित्य दिखाई नहीं देता कि प्रान्तीय विधानमंडल द्वारा संकल्प पारित किया जाना क्यों आवश्यक हो और संसद से कानून बनाने के लिये या संयुक्त आयोग गठित करने के लिये कहने की क्या आवश्यकता है? खंड (2) में निर्धारित प्रक्रिया खंड (3) में निर्धारित प्रक्रिया से बिल्कुल भिन्न है। यदि एक ऐसा लोक सेवा आयोग स्थापित करने के लिये जो सभी राज्यों के लिये काम करेगा। प्रान्तीय विधानमंडलों का अनुमोदन मांगा जाना आवश्यक नहीं समझा गया है, यदि राज्य आयोगों के परिसमापन के लिए संसद का अनुमोदन मांगा जाना आवश्यक नहीं समझा गया है, तो मुझे इसका कोई कारण दिखाई नहीं देता कि संयुक्त आयोग स्थापित करने के लिए भिन्न प्रक्रिया अपनाये जाने की क्या आवश्यकता है। संयुक्त आयोग स्थापित करने का मामला इतना अधिक महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि समूचे देश के लिये एक लोक सेवा आयोग स्थापित करने का है। यदि कोई राज्यपाल और राष्ट्रपति अथवा यदि सभी राज्यपाल और राष्ट्रपति संयुक्त रूप से कार्यवाही करके सभी राज्य आयोगों का परिसमापन कर सकते हैं तो मेरी समझ में नहीं आता कि संयुक्त आयोग स्थापित करने के मामले में प्रान्तीय विधानमंडलों और संसद को हस्तक्षेप करने के लिये कहने की क्या आवश्यकता है। यदि आप प्रान्तीय विधानमंडल से अपनी राय व्यक्त करने के लिये कहेंगे तो वे इसमें संकोच करेंगे क्योंकि वे सोचेंगे कि संयुक्त आयोग स्थापित किये जाने से उनकी कुछ शक्तियां छीन ली जायेंगी। हर कोई शक्ति को अपने हाथ में रखना चाहता है। कोई भी किसी दूसरे को शक्ति का अंतरण पसन्द नहीं करता।

जहां तक खंड (3) का सम्बन्ध है, यदि शक्ति राज्यपाल में उसके विवेकाधीन और शासक में उसके विवेकाधीन निहित की जाती तो बहुत अच्छा होता, क्योंकि प्रान्तीय मंत्री राज्य आयोगों के परिसमापन पर कभी सहमत नहीं होंगे। परन्तु यदि इस मामले को राज्यपाल पर उसके विवेकाधीन और शासक पर उसके विवेकाधीन छोड़ दिया जाये तो वे संभवत: समय की आवश्यकताओं के अनुरूप परिस्थतियों पर व्यापक रूप से विचार करेंगे और देश में संयुक्त लोक सेवा आयोग स्थापित करना उचित समझेंगे।

***डॉ. पी.एस. देशमुख** (मध्यप्रान्त और बरार: जनरल): आज हम लोक सेवा आयोग से सम्बन्धित अनुच्छेदों का अनुमोदन करने के लिये चर्चा कर रहे हैं। महोदय, इन आयोगों की स्थापना एक आधुनिक राज्य के लिये आवश्यक समझी जाती है। इन आयोगों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य यह है कि नियुक्तियों को दिन प्रतिदिन की राजनीति, दलगत वरीयताओं और प्रभावों से दूर रखा जाये और इस प्रकार के आयोग स्थापित करके इस बात का प्रयास किया जाता है कि नियुक्तियां यथासंभव योग्यता के आधार पर हों और राज्यों के कार्यकारी अधिकारियों द्वारा उनके चयन के मामले में कोई हस्तक्षेप न किया जाये। महोदय, मैं कुछ मिलाकर कह सकता हूं कि भारत में आयोगों का कार्य अधिक खराब नहीं रहा है, परन्तु ऐसे तरीके हैं जिनको अपनाकर प्राय: अपनी इच्छानुसार सिफारिशें प्राप्त कर ली जाती हैं अथवा उनको निष्फल बना दिया जाता है। जहां तक हमारे लोक सेवा आयोगों के कार्यकरण का सम्बन्ध है, इस सम्बन्ध में शिकायतें मिलती रहती हैं। ऐसा नहीं है कि उनके द्वारा पक्षपात किया गया हो अथवा इस प्रकार का कोई अन्य आरोप उनके विरुद्ध लगाया गया हो, परन्तु प्रक्रिया में ही इस प्रकार से जोड़-तोड़ किया जाता है अथवा कोई संक्षिप्त तरीका निकाल लिया जाता है जिसके परिणामस्वरूप पहले से की गयी नियुक्तियों के सम्बन्ध में लोक सेवा आयोगों का लगभग स्वत: अनुमोदन प्राप्त

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

हो जाता है। यह एक शिकायत है और इसका कारण अपनाये जाने वाला तरीका है। प्रायः मंत्री और विभागाध्यक्ष अस्थायी रिक्त स्थानों पर नियुक्तियां कर देते हैं और चूंकि एक नियम यह है कि जिस विभाग में स्थान रिक्त होता है उसका विभागाध्यक्ष भी एक सदस्य के रूप में आयोग में बैठता है और चूंकि उस पद पर पहले से नियुक्त उम्मीदवार की अर्हताओं अथवा क्षमता के सम्बन्ध में किसी अन्य सदस्य को कोई जानकारी नहीं होती अतः विभागाध्यक्ष की राय को अधिक महत्व दिया जाना स्वाभाविक ही होता है और आयोग के सदस्य नियम के अनुसार उसको महत्व देते हैं। अधिकांश मामलों में उसी की सिफारिश को स्वतः स्वीकार कर लिया जाता है। यह बुराई इतनी अधिक बढ़ गयी है कि कुछ लोगों का यह विचार बन गया है कि यद्यपि लोक सेवा आयोगों के उपबन्धों का पालन किया जाता है, परन्तु व्यक्तियों के लिये रिक्त स्थान बनाये जाते हैं, रिक्त स्थानों के लिये व्यक्ति तलाश नहीं किये जाते।

फिर भी, मैं एक भिन्न विचार करना चाहता हूं। आयोगों की इस पूरी व्यवस्था में और हमारे इस प्रयास में कि हम अत्यन्त न्यायसंगत व निष्फल रहे हैं और केवल योग्यता को ही महत्व दें, मैं कहना चाहूंगा कि भारत के ग्रामीण समाज को भारी हानि उठानी पड़ी है, इनको कहीं कोई प्रतिनिधित्व नहीं मिला है। उन्नत वर्ग ही आगे बढ़ रहा हैं और अपने निजी हित की रक्षा कर रहा है और इन समुदायों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। कुछ थोड़े लोग हैं जो अपने आपको संगठित कर लेते हैं, प्रचार तथा अन्य तरीकों से सरकार का कार्य करना असम्भव बना देते हैं क्योंकि वे अपनी मांगों को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत कर सकते हैं और सरकार से मनवा सकते हैं, परन्तु जहां तक बड़ी संख्या में लोगों का, लाखों और करोड़ों की जनसंख्या का सम्बन्ध है जिनमें शिक्षा की प्रतिशतता बहुत ही कम है और कुछ मामलों में तो अनुसूचित जातियों से भी कम है, वे पिछड़ गये हैं। इस तथ्य के बावजूद कि स्वतन्त्र भारत की सरकार सत्ता में है, इन समुदायों को सरकारी सेवाओं में प्रतिनिधित्व देने के लिये किसी प्रकार का कोई प्रयास नहीं किया जा रहा है। यदि हमने समय रहते इस पक्ष की ओर कोई ध्यान नहीं दिया तो मुझे विश्वास है कि यह भारत में क्रान्ति का एक प्रमुख कारण बनेगा। यह सुस्पष्ट तथ्य है जो प्रत्येक व्यक्ति के चेहरे पर दिखाई देता है देर-सवेर भारत में क्रान्ति अवश्य होगी। यह खूनी क्रान्ति होगी या नहीं, यह बात हमारे वर्तमान शासन पर निर्भर करती है। यदि हमने ग्रामीण समुदायों के उत्पीड़न और उनके शोषण का अन्त करने के सम्बन्ध में अवहेलना की, यदि हम उनकी मांगों पर ध्यान देने के लिये तैयार नहीं हुये और जब भी कभी वे अपनी मांगों के समर्थन में आन्दोलन करें तब उसको दबाने के लिये यदि सरकार ने लोक सुरक्षा अधिनियमों और बन्दूक की गोली का उत्तरोत्तर अधिक सहारा लिया तो खूनी क्रांति को रोका नहीं जा सकता। हमें उनकी मांगों पर समय रहते ध्यान देना होगा, चूंकि ये शिक्षा से वंचित हैं, उन्हें अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है और फिर भी उनका मुकाबला उन लोगों से कराया जाता है, जिनके पास ही उच्च विद्यालय और महाविद्यालय हैं तथा जिन्हें हर प्रकार की सुख-सुविधायें उपलब्ध हैं। आयोग सम्बन्धी इन उपबन्धों को पास करते हुये, सभा इस तथ्य पर भी कुछ ध्यान दे और देश के लिये इतने अधिक कठोर खंड न बनाये जिनमें प्रान्तीय सरकारों अथवा विधानमंडलों या भावी संसद को भी कोई आमूल परन्तु वांछनीय परिवर्तन करने में बहुत अधिक कठिनाई हो तो मैं उसके लिये सभा का आभारी रहूंगा। एक उपबन्ध

के अनुसार, आयोग का सदस्य छः वर्ष के लिये अपने पद पर बना रहेगा। इन व्यक्तियों का चयन वे व्यक्ति करेंगे जो अब पदारूढ़ हैं और उनके उत्तराधिकारी लम्बे समय तक इस व्यवस्था में कोई परिवर्तन नहीं कर सकेंगे। जहां तक इस पहलू का संबंध है, मैं यहां तक कह सकता हूं कि इन बड़े समुदायों, जो ग्रामीण क्षेत्रों में रहते है, जिनके उच्चतर शिक्षा प्राप्त होने के अवसर बहुत कम हैं, वे दावों के प्रति सरकार द्वारा निष्पक्ष और न्याय संगत रवैया अपनाये जाने के बारे में जनता को विश्वास नहीं है। मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि इन उपबन्धों को बनाते समय हमें भावी सांसदों के हाथ नहीं बांधने चाहिये। जब वयस्क मताधिकार का प्रयोग किया जायेगा तब नियुक्तियों की पूर्ण व्यवस्था एकदम भिन्न होगी। आज लाखों लोगों के दावे नहीं माने जाते, परन्तु इसके बाद उनको रोक पाना शायद संभव नहीं होगा। आज आप उनको घृणा की दृष्टि से देखते हैं। आप सोचते हैं कि केवल प्रथम श्रेणी में बी.ए. पास, आनर्स पास अथवा एम.ए. पास व्यक्ति ही सक्षम व्यक्ति हैं, जिनकी नियुक्ति के बारे में विचार किया जाना चाहिये। योग्यता के आधार पर प्रत्येक व्यक्ति को अवसर देते हुए आपको ऐसे लोगों के दावों पर भी विचार करना होगा जो पिछड़ गये हैं परन्तु इसमें उनका अपना कोई दोष नहीं था और आगे बढ़ने के लिये उनको अवसर उपलब्ध ही नहीं थे। यह एक महत्वपूर्ण मामला है। लोग सोचेंगे कि ये भौतिक लाभ की बातें हैं। परन्तु मैं इस विचार से सहमत नहीं हूं। यह बात भौतिक लाभ के लिये नहीं है, यह बात देश के प्रशासन की है, अंग्रेजों के अधीन नहीं बल्कि अपने ही लोगों के अधीन। इसमें संकोच की क्या बात है यदि प्रशासन की बागडोर आपके अपने ही लोगों में से "ए" या "बी" के स्थान पर "एक्स" या "वाई" के हाथ में हो जो इस देश का नागरिक है, जिसे कुछ बाधाओं के कारण कठिनाई का सामना करना पड़ता है, जबकि अन्य समुदायों को उन कठिनाईयों का सामना नहीं करना पड़ा? यदि आप इस बात की ओर ध्यान देने के लिये तैयार नहीं हैं तो मेरे विचार में आपको शीघ्र ही पछताना पड़ेगा।

मेरा निवेदन यह है कि जहां तक आयोग से सम्बन्धित उपबन्धों की बात है, वे अधिक कठोर नहीं होने चाहिये। यदि भावी संसद चाहे, यदि वह समझे कि वे उपबन्ध न्यायोचित नहीं हैं और भारत के विभिन्न समुदायों व जनता की मांगों को पूरा नहीं कर सकते, उनकी आकांक्षाओं पर पूरे नहीं उतरने, तो वह सम्बन्धित उपबन्धों को हटा सकने में सक्षम होनी चाहिये। मैं अपने माननीय मित्र से अपेक्षा करता हूं कि वह इन उपबन्धों को पास कराते समय इस पक्ष की ओर भी ध्यान देंगे और प्रान्तीय विधानमंडलों के हाथ नहीं बांधेंगे। मैं तो प्रान्तीय विधानमंडल समाप्त किये जाने के पक्ष में हूं परन्तु जब तक वे अस्तित्व में हैं, आपको उन पर कोई ऐसी रोक नहीं लगानी चाहिए कि ये संविधान के चीथड़े कर डालें। इसीलिए यह मामला भावी जनता पर छोड़ देना चाहिये।

मेरे कुछ मित्र जब भावी संसद के स्वरूप के बारे में विचार करते हैं, तो उनके मन में शंकायें उठती हैं। मेरे मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद को पहले से ही घबराहट हो रही है। यदि हम चाहते हैं कि हमारा संविधान दीर्घकाल तक अस्तित्व में रहे और उसमें कोई ठोस परिवर्तन न किये जायें तो भावी संसदों द्वारा इसमें संशोधन किये जाने के मार्ग में हम यथासंभव कम से कम बाधायें रखें। यदि आप इसको अधिक कठोर बना देंगे तो इसके खराब भागों के साथ-साथ अच्छे भाग भी समाप्त हो जायेंगे। चाहे आप अपने हितों की रक्षा करने के लिए राष्ट्रपति

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

को या शासन करने वाले वर्गों को असाधारण शक्तियां भी देने का प्रयत्न करें या दे दें तब भी आप वह नहीं कर पायेंगे, क्योंकि इन खंडों के कारण पूरे संविधान के चीथड़े पर दिये जायेंगे जहां तक लोक सेवा आयोगों के विषय का संबंध है, मैं इससे अधिक कुछ नहीं कहना चाहता।

श्री लक्ष्मीनारायण साहू: अध्यक्ष महोदय, मैं नये अनुच्छेद का जो प्रारूप संविधान के अनुच्छेद 284 का स्थान लेगा समर्थन करता हूं। परन्तु इसका समर्थन करने के साथ-साथ मैं यह भी कहना चाहता हूं कि लोक सेवा आयोग द्वारा चयन किये गये उम्मीदवार को अस्वीकार करने की शक्ति सरकार को प्राप्त नहीं होनी चाहिये। इन दिनों देखा गया है कि सरकार कभी-कभी लोक सेवा आयोग द्वारा चयन किये गये उम्मीदवार को अस्वीकार कर देती है। मैं चाहता हूं कि इस उपबन्ध को इतना कठोर बनाया जाये कि सरकार के पास आयोग के निर्णयों व उसके द्वारा चयन किये गये उम्मीदवार को अस्वीकार करने की शक्ति न रहे।

मैं दूसरी बात यह कहना चाहता हूं कि लोक सेवा आयोग के सदस्य, जब तक कि वे अपनी सेवावधि के बारे में निश्चिन्त नहीं हो जाते, सदा सरकार का मुंह ताकते रहेंगे। इसलिये मैं यह सुझाव देना चाहता हूं कि उनकी सेवावधि जो इस समय 6 वर्ष रखी गयी है, बढ़ा दी जानी चाहिये। उनकी सेवावधि के बारे में सुनिश्चितता होनी चाहिये ताकि वे स्वतन्त्र रहें और उचित तरीके से चयन पर सकें। यदि लोक सेवा आयोग के सदस्यों की सेवावधि के बारे में सुनिश्चितता नहीं होगी तो वे सदा सरकार की आज्ञा का पालन करेंगे। इसलिये मैं कहना चाहता हूं कि लोक सेवा आयोग के सदस्यों की सेवावधि बढ़ा दी जानी चाहिये। इसके अतिरिक्त मैं यह भी चाहता हूं कि अधीनस्थ सेवाओं के लिये भी लोक सेवा आयोग ही चयन करे। यदि अधीनस्थ सेवाओं के लिए चयन लोक सेवा आयोग के माध्यम से किया जाता है तो किसी को भाई-भतीजावाद बरते जाने की कोई शिकायत नहीं होगी। परन्तु यदि अधीनस्थ सेवाओं के लिए की जाने वाली नियुक्तियों को लोक सेवा आयोग के कार्यक्षेत्र से बाहर रखा जाता है तो किसी न किसी मन्त्री के विरुद्ध हमेशा यह शिकायत होती रहेगी कि उनके द्वारा की गयी नियुक्तियों में भाई-भतीजावाद बरता गया है। इस प्रकार की आलोचनाओं से बचने के लिये मैं चाहता हूं कि अधीनस्थ सेवाओं के लिये भी लोक सेवा आयोग द्वारा चयन किया जाये।

मैं डॉ. देशमुख द्वारा अभी-अभी, व्यक्त इस विचार से सहमत नहीं हूं कि लोक सेवा आयोग सम्बन्धी उपबन्धों को इतना कठोर नहीं बनाया जाना चाहिये कि भविष्य में उनमें कोई परिवर्तन ही न किया जा सके। बल्कि मैं तो यह चाहता हूं कि अभी से जबकि हम संविधान सभा के सदन की बैठकों में भाग ले रहे हैं, हमें लोक सेवा आयोग का गठन इस प्रकार करना चाहिये कि भविष्य में भी वह सुचारू रूप से कार्य करता रहे। प्रस्तुत अनुच्छेद में यह व्यवस्था है कि आयोग के सदस्यों को हटाया जा सकेगा। परन्तु जांच करने के बाद ही ऐसा किया जा सकेगा और इसलिये किसी के मन में इस बारे में कोई आशंका नहीं रहनी चाहिये।

इस अनुच्छेद में उल्लिखित "शासक" शब्द के बारे में मैं कुछ कहना चाहूंगा। हैदराबाद का मामला अभी तक अनिर्णित पड़ा है। इस बारे में विचार किया जाना

चाहिये कि उस राज्य का भावी स्वरूप क्या होगा। कुछ शासकों को राजप्रमुख मनोनीत कर दिया गया है, परन्तु मैं इस बात से सहमत नहीं हूं। भविष्य में जब राज्यों में पूर्ण लोकतन्त्र स्थापित हो जायेगा, तब क्या मनोनीत राजप्रमुख अपने पदों पर रह पायेंगे या अन्य लोग उनके स्थान पर आ जायेंगे, यह एक विचारणीय बात है। हमें इस मामले पर विचार करना चाहिये। जब राज्यों में वास्तव में लोकतन्त्र स्थापित हो जायेगा तब राजप्रमुखों के पदों पर, जिन पर इस समय भूतपूर्व शासक बैठे हैं जनता द्वारा चुने गये व्यक्ति आसीन होंगे। इसलिए मैं चाहूंगा कि प्रारूप समिति इस विषय पर विचार करे और यदि संभव हो तो मैंने जो कहा है उसे ध्यान में रखते हुए अनुच्छेदों में कुछ परिवर्तन करे।

***सरदार हुकम सिंह** (पूर्वी पंजाबः सिख): अध्यक्ष महोदय, यह तो स्पष्ट है एक आदर्श तरीके से केवल योग्यता के आधार पर भर्ती किये जाने की बहुत दुहाई दी जा रही है और पक्षपात अथवा भाई-भतीजावाद से बचने का एकमात्र उपाय स्वतन्त्र और निष्पक्ष आयोग का गठन ही है। परन्तु तस्वीर का एक दूसरा पहलू भी है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। भारत एक विशाल देश है और शिक्षा की दृष्टि से इसके सभी प्रदेशों का समान रूप से विकास नहीं हुआ है। फिर इस राष्ट्र में कुछ ऐसे वर्ग हैं जो अन्य वर्गों की अपेक्षा अधिक पिछड़े हुए हैं। इसमें उनका कोई दोष नहीं है कि जहां तक इस बारे में विकास का संबंध है उनको समान अवसर नहीं मिले हैं।

मैं सभा का ध्यान विशेषकर, पंजाब की ओर दिलाना चाहता हूं। इस प्रान्त ने अन्य प्रान्तों की अपेक्षा 70 वर्ष बाद शिक्षा के क्षेत्र में प्रवेश किया। कलकत्ता में पहली निजी शिक्षण संस्था हिन्दू कॉलेज, 1817 में स्थापित हुई जबकि बम्बई में पहली शिक्षण संस्था 1827 में खुली थी। परन्तु जहां तक पंजाब का संबंध है हमारे यहां सबसे पहली निजी शिक्षण संस्था 1887 में खुली। यही स्थिति विश्वविद्यालयों के बारे में थी। इन परिस्थितियों में पंजाब स्वाभाविक रूप से इस दौड़ में पीछे रह गया और यदि प्रान्तीय पहलू पर कोई ध्यान नहीं दिया गया तो पंजाब के लोग अन्य प्रान्तों के लोगों से मुकाबला नहीं कर सकेंगे।

इसके अतिरिक्त मैं इस सभा का ध्यान एक अन्य असाधारण स्थिति अथवा विपत्ति की ओर दिलाना चाहता हूं। हाल ही में देश के विभाजन के कारण प्रगति अवरुद्ध हुई है। आर्थिक दृष्टि से पूर्वी पंजाब बहुत पिछड़ा हुआ है। वहां एक साधारण काश्तकार के पास एक एकड़ या उससे भी कम भूमि है। यह जोत लाभप्रद नहीं है और काश्तकार अपने बच्चों को उच्चतर शिक्षा दिलाने में असमर्थ हैं। संयुक्त पंजाब में लगभग 70 प्रतिशत छात्र पश्चिमी पंजाब से आते थे जो अब पाकिस्तान में शामिल हो चुका है। इस विभाजन के कारण वे स्कूल और कॉलेज हमारे हाथ से निकल गये हैं। माता-पिता और अभिभावक साधनहीन हो गये हैं और अब वे अपने बच्चों को शिक्षा दिलाने में असमर्थ हैं। आपने देखा होगा कि स्कूल जाने वाली आयु के बच्चे बाज़ारों और गलियों में अपने सिरों पर भुने हुये चने अथवा सिगरेट रखकर बेच रहे हैं। उनकी शिक्षा रुक गयी है और अच्छी नियत होने के बावजूद उनके पुनर्वास के लिये कुछ नहीं किया गया है। युवक और वृद्ध सभी अपने जीवन यापन के लिये संघर्ष कर रहे हैं। इन बाधाओं के रहते हुये क्या यह संभव है कि ये पंजाबी छात्र उन प्रान्तों के जो अधिक उन्नत हैं और जहां शिक्षा की व्यवस्था बहुत पहले से है, उम्मीदवारों के साथ किसी खुली

[सरदार हुकम सिंह]

प्रतियोगिता में मुकाबला कर सकें? फिर इसका परिणाम क्या होगा? केन्द्रीय सचिवालय में पहले ही मेनन, स्वामी और आयंगर भरे पड़े हैं। और कुछ ही वर्षों में हम देखेंगे कि प्रान्तों में बड़ी संख्या में ऐसे महत्वाकांक्षी युवक आ जायेंगे जो स्थानीय रीति-रिवाओं से परिचित नहीं होंगे। स्थानीय समस्याओं को कोई नहीं समझेगा। स्थानीय युवक सेवाओं में जाने से वंचित रह जायेंगे और नये पूर्वाग्रह जन्म लेंगे जिससे पंजाब जैसे पिछड़े क्षेत्रों में प्रगति और विकास रुक जायेगा। देश के प्रत्येक अंग की प्रगति समान रूप से नहीं होगी।

मैं एक अन्य बात भी कहना चाहूंगा। विभाजन से पूर्व केन्द्र में पंजाब का प्रतिनिधित्व अधिकांशतः मुसलमानों का था। विभाजन हो जाने से वे लोग पाकिस्तान चले गये हैं। अब पंजाब का प्रतिनिधित्व बहुत ही कम रह गया है और यदि समूचे देश के लिये खुली प्रतियोगिता होती है तो उस प्रतिनिधित्व में सुधार होने की कोई सम्भावना नहीं है। यदि प्रादेशिक भर्ती के लिये कोई प्रोत्साहन नहीं किया गया तो शिक्षा व आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुये क्षेत्र शिक्षा की दृष्टि से देश के उन्नत क्षेत्रों के उपनिवेश बनकर रहे जायेंगे। इसलिये मैं सभा से अपील करता हूं कि वह इस मामले पर शान्त भाव से विचार करे और कम से कम पंजाब के मामले में विशेष उपबन्ध करे, क्योंकि इस शरणार्थी समस्या की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। मैं इस बात पर पुनः जोर देना चाहता हूं कि इन विस्थापित लोगों के लिए, जिन हालात में वे जीवनयापन कर रहे हैं, अपने बच्चों को उपयुक्त शिक्षा देना संभव है जो उनको प्रतियोगिता के लिए तैयार कर सके और जिसकी आप केवल योग्यता के आधार पर भर्ती के लिये अपेक्षा करते हैं। इसलिए मेरा निवेदन यह है कि प्रादेशिक भर्ती के लिये कुछ रियायत अवश्य दी जानी चाहिये, जिससे पिछड़े क्षेत्रों को ऐसे समय तक विकास करने के अवसर मिल सकें जब तक कि उनके युवक अन्य प्रान्तों के युवकों के साथ मुकाबला करने के लिये तैयार नहीं हो जाते।

चौधरी रणबीर सिंह (पूर्वी पंजाबः जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद के समर्थन में डॉ. पंजाबराव देशमुख द्वारा व्यक्त किये गये विचारों से मैं पूरी सहमत हूं। मैं खूब समझता हूं कि इन परिस्थितियों में खुली प्रतियोगिता का क्या अर्थ हो सकता है। शहर में पैदा हुआ बच्चा अपने बचपन से ही रेडियो सुनता है, उसको घर में दैनिक समाचार पत्र प्राप्त होता है और अनेक सुविधायें उपलब्ध होती हैं, स्कूल भी उसके निवास स्थान से कुछ गज की दूरी पर ही होता है। जब वह बच्चा तीन या चार वर्ष का होता है, वह स्कूल एवं बाजार में अनेक बातें सीख सकता है। जो गांव कोई आठवीं कक्षा पास लड़का भी नहीं सीख सकता। जब लोक सेवा आयोग द्वारा कोई प्रतियोगिता आयोजित की जाती है, तब एक ही प्रकार के प्रश्न पूछे जाते हैं और निर्णय करने की कसौटी वही होती है कि क्या वह पूछे गये उन प्रश्नों का उत्तर दे सकता है या नहीं; हमारा देश गांवों का देश है और ग्रामीण जनता अधिक है, परन्तु तथ्यों के आधार पर इस बात से कोई इंकार नहीं कर सकता कि शहर के लोगों का विकास अपेक्षाकृत तीव्र गति से हुआ है और वे ग्रामीण जनता की अपेक्षा बहुत अधिक उन्नत हैं औन इन परिस्थितियों में यदि ग्रामीण क्षेत्र के किसी व्यक्ति का शहरी क्षेत्र के किसी व्यक्ति के साथ मुकाबला कराया जाता है और उनसे एक ही प्रकार के प्रश्न पूछे जाते

हैं तो इस बात में कोई सन्देह नहीं कि ग्रामीण व्यक्ति शहरी व्यक्ति के साथ सफलतापूर्वक अथवा समानता के आधार पर मुकाबला नहीं कर सकेगा।

इस स्थिति के समाधान के दो तरीके हैं। एक तरीका यह है कि ग्रामवासी उम्मीदवारों के लिये सरकारी सेवाओं में कुछ अनुपात आरक्षित कर दिया जाये और सेवाओं में उन्हें आरक्षित संख्या के पद आबंटित किये जायें और उन पदों के लिये केवल ग्रामीण जनता के उम्मीदवारों को ही मुकाबला करने की अनुमति दी जाये।

दूसरा तरीका यह है कि लोक सेवा आयोग के सदस्य नियुक्त करते समय इस बात को विशेष रूप से ध्यान में रखा जाये कि उनमें 60-70 प्रतिशत सदस्य ऐसे होने चाहियें जो ग्रामवासियों की कठिनाइयों को समझते हों और उनके साथ सहानुभूति रखें। मैं आपको एक सामान्य दृष्टान्त देना चाहता हूं। हमारी सेना में भर्ती के लिये एक नियम लागू किया गया है कि प्रारम्भिक प्रतियोगिता लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित की जायेगी। आप इस बात को समझ सकते हैं कि एक लड़का पढ़ाई में बहुत अच्छा हो सकता है परन्तु यह आवश्यक नहीं कि वह लड़ाई के दाव-पेंच में भी पारंगत हो, क्योंकि लड़ाई में केवल ऐसा व्यक्ति ही सफल हो सकता है किसका शरीर गठा हुआ हो और दिल मजबूत हो। लोक सेवा आयोग के माध्यम से आप ऐसे लोगों का चयन कर सकते हैं जो अच्छी अंग्रेजी जानते हैं, परन्तु यदि ऐसे लोग सेना में भेजे जाते हैं तो इस बात को आप निश्चित समझें कि सेना को अपने कार्य में कभी सफलता नहीं मिलेगी। सेना का कार्य बिल्कुल भिन्न प्रकार का है। सेना के एक अधिकारी के सम्बन्ध में हमें यह देखना होता है कि उसमें बलिदान की भावना कितनी है, उसमें कितना साहस है और वह कितना शारीरिक कष्ट झेल सकता है। परन्तु यदि सेना के लिये भर्ती प्रारम्भिक प्रतियोगिता के आधार पर की गयी तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि सेना के लिए भर्ती के क्षेत्र में भी ग्रामीण लोग पीछे रहे जायेंगे। इसमें कोई संदेह नहीं कि पहले जिन लोगों को युद्धप्रिय जातियां कहा जाता था, वे ग्रामीण क्षेत्रों में ही होती थीं, वे लोग अब भी सेना में सिपाही के रूप में भर्ती होते हैं। परन्तु सैनिक अधिकारी अधिकांशत: शहरी लोग होते हैं। समय की मांग यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों के पिछड़े लोगों को आगे बढ़ने में मदद की जाये और इस समय उनकी जनसंख्या के आधार पर उन्हें सैनिक अधिकारी के रूप में उचित स्थान दिया जाये।

आजकल ऐसे बहुत से गांव हैं जहां प्राथमिक विद्यालय तक नहीं हैं। सर्वप्रथम तो एक ग्रामीण की खर्च करने की क्षमता इतनी कम होती है कि वह अपने बच्चों को शहर में माध्यमिक अथवा उच्चतर विद्यालयों में भेज ही नहीं सकता। इसके अतिरिक्त आप विचार कर सकते हैं कि कितने गांवों में प्राथमिक शिक्षा के लिये सुविधायें उपलब्ध करायी गयी हैं।

इन परिस्थितियों में यदि आप एक यन्त्र की तरह काम करना चाहते हैं तो मुझे इस बात में कोई सन्देह नहीं कि डॉ. देशमुख द्वारा व्यक्त की गयी शंकाएं सही प्रमाणित होंगी। यदि देश को अहिंसा के आधार पर प्रगति करनी है तो हमें परिस्थितियों के अनुरूप इस पहलू पर विचार करना होगा। जैसा कि हमने पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जातियों के लिए कुछ स्थान आरक्षित किये हैं, हम संभवत: वही तरीका ग्रामीण जनता के संबंध में भी अपना सकते हैं। यह तरीका तो लोक सेवा आयोग के संबंध में या सरकारी सेवाओं के संबंध में अपनाया जा सकता है। यदि कुछ पद आरक्षित कर दिये जायें और उन पदों के लिये प्रतियोगिता में केवल ग्रामीण युवकों को ही अनुमति दी जाये तो बेहतर होगा।

[चौ. रणबीर सिंह]

एक बात और है। हममें से बहुत से लोग हैं जिनका जन्म शहरों में हुआ है और जिन्होंने शहरों में शिक्षा प्राप्त की है और जो अच्छी अंग्रेजी बोल सकते हैं। उन्हीं का लोक सेवा आयोग द्वारा प्रतियोगिता में चयन किया जाता है, परन्तु उनमें से अधिकांश को ग्रामीण जीवन की जानकारी नहीं होती और वे ग्रामीण जीवन में होने वाली कठिनाइयों को सहन नहीं कर सकते। वहां पर न तो सड़कें हैं और न शहरों में उपलब्ध होने वाली सुविधायें हैं। इसलिये वहां पर जाकर काम करना इतना आसान नहीं है। इसलिए वे अधिकारी ग्रामीण क्षेत्रों में जाने से जी चुराते हैं और सब काम अपने अधीनस्थ कर्मचारियों पर छोड़ देते हैं। इस प्रकार ग्रामीण लोगों को उचित न्याय नहीं मिल पाता। इसलिए मेरे विचार में लोक सेवा आयोग गठित करते समय डॉ. देशमुख द्वारा दिये गये सुझावों को ध्यान में रखा जाना चाहिये।

मैं श्री साहू की इस बात से सहमत नहीं हूं कि लोक सेवा आयोग के सदस्यों की सेवावधि बढ़ा दी जानी चाहिये। राष्ट्रीय कांग्रेस के हमारे भूतपूर्व प्रधान आचार्य कृपलानी ने घोषणा की है कि सरकार सफल नहीं हुई है। इसका एक कारण यह है कि सरकार लोक सेवा आयोग के साथ सहयोग नहीं कर रही है और इसका एक मुख्य कारण यह है कि लोक सेवा आयोग का गठन पुरानी व्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुसार किया गया था और पिछली सरकार ने उसके सदस्यों को अपने विचारों के अनुसार नियुक्त किया था।

इसलिए यह आवश्यक है कि सरकार बदल जाने के साथ-साथ सेवाओं में भी बदलाव आये। सरकार को इस मामले में हस्तक्षेप करने का अधिकार होना चाहिये जिससे, जब वह आवश्यक समझे, आयोग के किसी सदस्य को सेवा से हटा सके। इसलिये मैं डॉ. देशमुख के विचार का पूरी तरह से समर्थन करता हूं।

जहां तक भाई-भतीजावाद का संबंध है, यह तो भविष्य में भी चलता रहेगा, इसको रोकना इतना सरल नहीं है जितना कि आप सोचते हैं। लोक सेवा आयोग के सदस्यों के सामने कई बातें विचार किये जाने के लिये होती हैं। मेरे इस विचार में इस बुराई से हमें अधिक भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। भाई-भतीजावाद को तभी रोका जा सकता है जब उनका अन्तःकरण निर्मल व मजबूत हो जाये और उनके विचारों में परिवर्तन आ जाये। जब तक लोक सेवा आयोग के सदस्यों के वर्तमान विचारों और मन में परिवर्तन नहीं आता, आप लोक सेवा आयोग के सदस्यों की सेवावधि बढ़ाकर उसको रोक नहीं सकते।

***अध्यक्षः** मैं माननीय सदस्यों को स्मरण कराना चाहूंगा कि इन अनुच्छेदों के संबंध में अब तक जो भाषण दिये गये हैं उनका स्वयं अनुच्छेदों के साथ कम संबंध है। वे सरकारी सेवाओं के स्वरूप, भर्ती के तरीके, किन लोगों को भर्ती किया जाना चाहिये आदि से अधिक सम्बन्धित रहे हैं। अब मैं अप्रासंगिक बातों के उल्लेख की अनुमति नहीं दूंगा। मैं माननीय सदस्यों से अनुरोध करूंगा कि वे विचाराधीन अनुच्छेदों पर अपने विचार व्यक्त करें।

***श्री बी.एन. मुनावल्लीः** (बम्बई राज्य): अध्यक्ष महोदय इस समय बहुत ही

महत्वपूर्ण विषय अर्थात् सिविल सेवाओं पर चर्चा कर रहे हैं। ग्रेट ब्रिटेन की सरकार वस्तुत: मंत्रिमंडल या अलग-अलग मंत्रियों द्वारा नहीं चलायी जाती बल्कि उसे सिविल सेवा के अधिकारी चलाते हैं। इसलिये सिविल सेवओं के महत्व से इन्कार नहीं किया जा सकता। इसलिये हमारे संविधान में लोक सेवा आयोग की व्यवस्था की गयी है। इन अनुच्छेदों के अनुसार उम्मीदवारों की नियुक्ति योग्यता के आधार पर की जायेगी। अन्य देशों में भी आजकल वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि केवल योग्यता के आधार पर ही चयन की प्रणाली सफल सिद्ध हो सकती है। इससे पूर्व ग्रेट ब्रिटेन में संरक्षण प्रणाली का प्रयोग किया गया था। मन्त्रियों के संबंधियों, मित्रों और समर्थकों को सरकारी पद मिलते थे और अमेरिका में भी सफलता-प्राप्त दल के मित्रों व समर्थकों को सार्वजनिक पद प्रदान करने की पद्धति प्रचलित थी और कहा जाता है कि इस पद्धति के जन्मदाता एन्ड्रयू जैक्सन थे। यह पद्धति 1828 से जबएन्ड्रयू जैक्सन अमेरिका के राष्ट्रपति बने थे, लगभग 50 वर्ष तक चलती रही, परन्तु उसके बाद उन्होंने पाया कि इस पद्धति को जारी रखा जाना बहुत कठिन है। इसलिये उन्होंने तीन सदस्यों का एक आयोग नियुक्त किया जिसका कार्य रिक्त स्थानों को भरने के लिये परीक्षायें आयोजित करना था। ग्रेट ब्रिटेन और अमरीका में प्रचलित परीक्षा प्रणालियों में पर्याप्त भिन्नता है। अमरीका में व्यवहारिक पक्ष को अधिक महत्व दिया जाता है, परन्तु ग्रेट ब्रिटेन में सामान्य शिक्षा को अधिक महत्व दिया जाता है अमरीका में विभिन्न विभागों में भिन्न-भिन्न पदों के अनुसार 1700 प्रकार की परीक्षाएं आयोजित की जाती हैं। इंग्लैंड में एक कानून बनाकर वर्ष 1835 से योग्यता के आधार पर चयन करने की प्रणाली अस्तित्व में आयी थी। जापान में भी यह प्रणाली वर्ष 1888 में अस्तित्व में आयी थी।

अत: यदि हम विभिन्न देशों के संविधानों पर दृष्टिपात करें तो हम पायेंगे कि परीक्षाओं के माध्यम से ही योग्यता के आधार पर सिविल सेवाएं बनायी जाती हैं। भारत में भी इसी प्रणाली को लागू करने का प्रस्ताव है और इसी विचार से अनुच्छेद 284 रखा गया है जिसमें संघ एवं राज्यों दोनों में लोक सेवा आयोग गठित किये जाने की व्यवस्था की गयी है। परन्तु भारत में परिस्थितियां बिल्कुल भिन्न हैं। हमें अनेक बातों का ध्यान रखना पड़ेगा। यदि हमने केवल योग्यता के आधार पर ही भर्ती की तो, जैसा कि हमारे माननीय मित्र डॉ. देशमुख ने ठीक ही कहा है, सरकारी सेवाओं में बहुसंख्यक समुदायों का कोई प्रतिनिधित्व नहीं रह जायेगा; परन्तु कुछ बातें ऐसी हैं जो शिकायतों को दूर करने में काफी हद तक सहायक होंगी। सरकारी सेवा में रिक्त स्थानों को भरने के लिये पहले तीन वर्ग होते थे, अर्थात उन्नत वर्ग, मध्यम वर्ग और पिछड़े वर्ग, ताकि पदों का उचित और समान वितरण हो सके। यदि प्रत्येक वर्ग के लिये पृथक परीक्षायें आयोजित की जायें और प्रत्येक वर्ग से योग्यता के आधार पर उम्मीदवारों का चयन किया जाये तो मेरे विचार में लोगों के मन में अधिक ईर्ष्या नहीं होगी। परन्तु, अब जब से कांग्रेस सत्ता में आयी है विभिन्न प्रान्तों में हम देखते हैं कि कुछ गिनती के समुदाय जो बहुत उन्नत हैं, सरकारी सेवा में अधिकांश पदों पर आसीन हो रहे हैं और इसलिये देश में व्यापक रूप से असन्तोष व्याप्त है, यहां तक कि यदि समय रहते इस स्थिति का समाधान करने के लिये कोई उपाय नहीं किये गये तो रक्तरंजित अथवा रक्तहीन क्रान्ति भड़क उठने की पूरी आशंका है।

इसलिये मेरे विचार में इसके बाद जो लोक सेवा आयोग नियुक्त किया जायेगा वह यह सुनिश्चित करने के लिये विभिन्न बातों का ध्यान रखेगा कि केवल उन्नत

[श्री बी.एन. मुनावल्ली]

वर्गों को ही उचित प्रतिनिधित्व न मिले, बल्कि मध्य और पिछड़े वर्गों को भी उनकी अपनी योग्यता और स्तर के अनुसार प्रतिनिधित्व मिले।

***श्री कुलधर चालिहा** (असम: जनरल): मैं यथासंभव संक्षेप में बोलूंगा; हमें अध्यक्ष के निदेशों का पालन करना चाहिये जो यह चाहते हैं कि हम अपनी बात संक्षेप में कहें। मैं इस समनुषंगी अनुच्छेद का सामान्य रूप से समर्थन करता हूं और मेरे विचार में वर्तमान परिस्थितियों में इसकी रचना सर्वोत्तम है। मेरा पूर्ण विश्वास है कि इसमें बहुत अच्छे-अच्छे व्यक्ति हैं जो न केवल जनता के अधिक उन्नत वर्ग के साथ न्याय करेंगे बल्कि पददलित और उत्पीड़ित वर्गों के साथ भी न्याय करेंगे; इस बारे में जो सन्देह व्यक्त किया गया है कि उनको भुला दिया जायेगा वह एक आरोप है और उसका खंडन किया जाना चाहिये। हमारा भी कुछ चरित्र है और उपयोग करने के लिये हमारे पास बुद्धि है। वास्तव में बात यह है कि हम इस प्रकार सभी लोगों पर सन्देह करते रहे हैं, जिसके कारण हम विश्वास करने लगे हैं कि हम ऐसे लोग हैं जो अन्य लोगों के साथ, अपने पड़ोसियों के साथ, अपने भाइयों के साथ न्याय नहीं करेंगे। इस प्रकार के आरोप का इसी सदन में खंडन दिया जाना चाहिये। मेरे विचार में अनेक अनुच्छेदों में से यह अनुच्छेद सर्वोत्तम है जो अनेक सुझावों को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है।

श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने कहा है कि हमें दो आयोग—एक संघ व दूसरा राज्य के लिये—गठित नहीं करने चाहियें, बल्कि एक ही अखिल भारतीय आयोग रखना चाहिये। इस अनुच्छेद का उद्देश्य बहुत ही उत्तम है और सबसे पहले हमें यह सुनिश्चित करना चाहिये कि यह व्यवस्था उस उद्देश्य को पूरा करे। उन्होंने स्वयं ही आरोप लगाया है कि सभी प्रान्तीय आयोगों में भ्रष्टाचार आदि व्याप्त हैं और इस संबंध में इस सभा में और भी बहुत कुछ कहा गया है। इस प्रकार के निराधार आरोप लगाकर प्रान्तीय सरकारों को अविश्वसनीय बना दिया गया है और इसका परिणाम बहुत ही खराब हुआ है। मैं इस बात को मानकर चलता हूं कि हमें किसी प्रान्तीय मंत्रिमंडल अथवा प्रधान मंत्री के विरुद्ध इस सदन में आरोप नहीं लगाने चाहिये; यह बहुत ही खराब बात है और प्रान्तों में अन्य स्थानों पर और जनता में इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ा है। मेरे विचार में बिना उचित जांच पड़ताल के ऐसे आरोप नहीं लगाये जाने चाहिये और आशा है कि श्री ब्रजेश्वर प्रसाद जैसे उत्तरदायी, संतुलित व ईमानदार व्यक्ति ऐसा नहीं करेंगे और मेरा विश्वास है कि वह अन्य व्यक्तियों में भी उतनी ही ईमानदारी देखेंगे जितनी कि वह स्वयं में समझते हैं।

महोदय, मैं महसूस करता हूं कि सरदार हुकुम सिंह को कुछ ऐसा सन्देह हुआ है कि देश के प्रशासन पर मेनन और आयंगर छाये हुये हैं। निस्संदेह बुद्धिमत्ता का लाभ तो होता ही है, परन्तु मैंने यह भी पाया है कि जब मैं सेना मुख्यालय में जाता हूं तो देखता हूं कि वहां पर रोबदार दाढ़ी वाले सिख अथवा स्पष्टवादी मोटे-ताजे पंजाबी बहुत बड़ी संख्या में मौजूद हैं। साहस और उपयुक्तता का सर्वदा महत्व होता है और क्योंकि वे इन सेवाओं के लिये उपयुक्त हैं, वे उन पदों पर टिके हुये हैं। इस सबके बावजूद मेरे विचार में अखिल भारतीय लोक सेवा आयोग प्रान्तों में रहने वाले सभी वर्गों के साथ न्याय करेगा।

महोदय, मैं इस अनुच्छेद में इस बात को पसन्द नहीं करता और इस संबंध में मैं श्री नज़ीरुद्दीन से पूर्णतया सहमत हूं कि डॉ. अम्बेडकर के संशोधनों के अन्दर कोई ऐसी विचारधारा निहित प्रतीत होती है जिसका प्रयोजन प्रान्तों से अधिक से अधिक शक्ति लेकर संघ में शक्ति केन्द्रित करना है। प्रारूप संविधान में हमने ऐसा कोई विषय नहीं छोड़ा जिसके संबंध में कोई प्रान्त पहल कर सके। अब मैंने यह पाया है कि जो थोड़ा बहुत रह गया था इसे भी छीन लिया गया है। यदि दो या दो से अधिक राज्य एक संयुक्त लोक सेवा आयोग गठित करना चाहते हैं और यदि संसद द्वारा इस संबंध में संकल्प का अनुमोदन कर दिया जाता है और विधि बना दी जाती है तो यह सब कुछ परस्पर सहमत से ही किया जाना है, और अब उस शक्ति को भी छीन लिया गया है। हमने प्रान्तों के लिए पहल करने हेतु कुछ नहीं छोड़ा। यदि कुछ राज्य किसी विषय पर सहमत हो भी जाते हैं और मिलजुलकर संयुक्त रूप से कुछ करते हैं तो इस अधिकार को भी विधान में से निकाल लिया गया है। यह निश्चय ही दुर्भाग्यपूर्ण है और हम किसी न किसी प्रकार से अपने प्रान्तों को कठपुतली मात्र बनाते जा रहे हैं। हमने ऐसी कोई बात नहीं छोड़ी जिसमें प्रान्त नेतृत्व कर सकें अथवा पहल कर सकें। डॉ. अम्बेडकर के संशोधनों से स्पष्ट झलकता है कि केन्द्र को अधिक से अधिक शक्ति दी जानी चाहिए। इसलिये मैं श्री नज़ीरुद्दीन अहमद का समर्थन करना चाहता हूं जिन्होंने दो संशोधन प्रस्तुत किये हैं और यदि उनको स्वीकार कर लिया जाता है तो उससे प्रान्तों को अधिक शक्ति मिलेगी और उनके प्रान्त संयुक्त लोक सेवा आयोग बना सकेंगे और परस्पर सहमति से नियम बना सकेंगे। नये समनुषंगी अनुच्छेद में इन साधारण शक्तियों को भी छीन लिये जाने की व्यवस्था है।

मैं सामान्य रूप से महसूस करता हूं कि अनुच्छेद का प्रारूप अच्छी नियत से बनाया गया है और जैसा कि अध्यक्ष महोदय ने कहा है हमें अप्रासंगिक बातें नहीं कहनी चाहियें। अतः मैं इन शब्दों के साथ नये समनुषंगी अनुच्छेद का समर्थन करता हूं।

***श्री राजबहादुर** (संयुक्त राज्य मत्स्य): अध्यक्ष महोदय, मैं इस अनुच्छेद पर सभा में आज दिये गये कुछ भाषणों से यह समझ पाया हूं कि जिस आधार और सिद्धान्तों पर लोग सेवा आयोग गठित किए जाने का प्रस्ताव है उन्हीं की आलोचना की गयी है। मेरे माननीय मित्र डॉ. देशमुख व श्री रणबीर सिंह ने सुझाव दिया है कि सरकारी सेवाओं में भर्ती के मामले में शहरी लोगों और ग्रामीण लोगों के बीच वर्ग भेद अथवा अन्तर किया जाना चाहिये। यद्यपि मैं शहरी अथवा ग्रामीण लोगों की वकालत करने के लिये खड़ा नहीं हुआ हूं, परन्तु मैं भारत की जनता के बीच सभी प्रकार के भेद-भावों अथवा वर्ग-भेद का तीव्र विरोध करता हूं।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** मैंने वर्ग-भेद का न तो कोई सुझाव दिया है और न मैं उसको मानता हूं; मैंने केवल यह कहा है कि उपबन्ध अधिक कठोर नहीं बनाये जाने चाहियें।

***श्री राजबहादुरः** यदि आपने ऐसा नहीं कहा है तो मुझे प्रसन्नता है। मेरे विचार में आपने ग्रामीण समुदायों को कुछ वरीयता देने का सुझाव दिया है, क्योंकि वे शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हुये हैं और कहा है कि इसलिये योग्यता के आधार पर चयन के सिद्धान्त में उस हद तक संशोधन किया जाना चाहिये। हमारे संविधान में इस प्रकार का कोई विभेद या अन्तर किये जाने की अनुमति नहीं दी गई है।

[श्री राजबहादुर]

यह बात मूलभूत अधिकारों से सम्बन्धित कुछ अनुच्छेदों के भी विरुद्ध है जिन्हें हम स्वीकार कर चुके हैं। हमें पता है कि अनुच्छेद 9 में इस बात का विशेष रूप से उल्लेख है कि "राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा"। इसी प्रकार जहां तक नियोजन का संबंध है, अनुच्छेद 10 में, "जिसे हमने पहले ही स्वीकार कर लिया है, यह उपबन्ध है कि "राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से सम्बन्धित विषयों में सभी नागरिकों के लिये अवसर की समता होगी"। महोदय, मैं इसलिये इस बात पर बल देता हूं कि यदि हम उन आधारभूत बातों व सिद्धांतों, जिन पर लोक सेवा आयोग बनाये जाने हैं, की बारीकी से छानबीन करें तो हमें पता चलेगा कि इन आयोगों को गठित करने की आवश्यकता मुख्य रूप से तीन कारणों से अनुभव की गयी थी। पहला कारण यह था कि जब ये आयोग अस्तित्व में नहीं थे तब पक्षपात और भाई-भतीजावाद का बोलबाला था और व्यक्तिगत पसन्द या नापसंद और सनक तथा भावनाओं के आधार पर भर्ती की जाती थी; दूसरे योग्यता को मान्यता नहीं दी गयी थी, तथा सरकारी नौकरी के लिये चयन हेतु योग्यता के स्थान पर जन्म, वंश अथवा इसी प्रकार की अन्य बातों को मान्यता दी जाती थी और अन्त में यह कि नौकरी पाने के लिये पहुंच निर्बाध रूप से निकाली जाती थी। इन सभी दोषों को दूर करने के लिये, राज्य में सभी पदों के लिये सर्वोत्तम तथा अत्यंत पात्र व्यक्तियों की नियुक्ति सुनिश्चित करने के लिये हमने लोक सेवा आयोगों की स्थापना की आवश्यकता अनुभव की और इस प्रकार वे अस्तित्व में आये। महोदय, मेरा विचार है कि राज्य के अन्तर्गत सभी नियुक्तियों के लिये चयन हेतु केवल योग्यता ही एकमात्र आधार होना चाहिये। यदि हम योग्यता के सिद्धान्त की बलि चढ़ा देते हैं और इसमें संशोधन करने का प्रयास करते हैं तो यह एक खतरनाक उदाहरण तथा बहुत ही खतरनाक सिद्धांत होगा। जहां तक इस देश में ग्रामीण जनसंख्या के पिछड़ेपन तथा उसकी अक्षमताओं का संबंध है, मैं अपने मित्र डॉ. देशमुख के विचारों से हार्दिक सहानुभूति रखता हूं तथा उनके दृष्टिकोण को स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्ष:** मैं यह बताना चाहता हूं कि माननीय सदस्य इस अनुच्छेद की सीमा से बाहर जा रहे हैं। हम किसी विशेष वर्ग अथवा ग्रुप के लिये नियुक्तियों पर चर्चा नहीं कर रहे हैं; हम केवल लोक सेवा आयोगों पर चर्चा कर रहे हैं।

***श्री राजबहादुर:** महोदय, मुझे आपका निर्णय स्वीकार है। मैं केवल यह कह रहा था कि इस अनुच्छेद पर चर्चा करते हुए लोक सेवा आयोगों के सृजन की आवश्यकता तथा आधार पर ही प्रहार कर दिया गया। मैं उस आधार की रक्षा करना चाहता हूं, मेरे विचार में अनुच्छेद 284 आवश्यक है। जिस प्रकार कि डॉ. देशमुख ने अपने विचार व्यक्त किये, उससे लगता है कि वह लोक सेवा आयोग के सृजन के विरोधी हैं। अत: मेरे द्वारा इस संबंध में कुछ टिप्पणियां किया जाना उचित ही है। जो कुछ भी मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि सेवाओं के लिये व्यक्तियों का चयन करने के लिये हमें योग्यता के सिद्धांत को अवश्य ही मान्यता देनी होगी और हमें लोक सेवा आयोगों के सृजन की आवश्यकता को भी मान्यता देनी चाहिये।

मैं इस बात को पूरी तरह स्वीकार करता हूं कि हाल ही के वर्षों के दौरान जिस प्रकार लोक सेवा आयोगों ने काम किया है, उसके संबंध में गंभीर शिकायतें

हैं। यह आम शिकायत है कि स्थान पहले ही भर लिये जाते हैं तथा चयन और साक्षात्कार केवल औपचारिक कार्यवाही है ताकि दिखावा बनाये रखा जाए। मैं नहीं जानता कि यह शिकायत कितनी सही है, परंतु शिकायत तो है ही। इस सीमा तक डॉ. देशमुख की टिप्पणियां सही हैं। मैं जिस बात का सुझाव देना चाहता हूं वह यह है कि वर्गों के भेद-भाव पर बल नहीं दिया जाना चाहिये। डॉ. देशमुख द्वारा व्यक्ति किये गये विचारों पर यह मेरी मुख्य आपत्ति है और सदन के कीमती समय से जो मैंने कुछ मिनट लिये हैं उसका यही औचित्य है।

मैं अपने उन माननीय मित्रों को जिन्होंने कि लोक सेवाओं में ग्रामीण लोगों की अल्प प्रतिशतता के बार में अपनी वाकपटुता का प्रयोग किया है, याद दिलाना चाहता हूं कि सेवाओं में ग्रामीण लोगों की इस अल्प-प्रतिशतता तथा शहरी लोगों के बाहुल्य का कारण कुछ मनोवैज्ञानिक परिस्थितियां तथा कुछ परंपरायें भी हैं हमारे देश में एक कहावत बनी रही है:

उत्तम खेती, मध्यम बान,
निखद्द चाकरी, भीख निधान।

हम अपनी जीविकाओं के चयन में सदैव ही ये सिद्धांत या दृष्टिकोण अपनाते रहे हैं और यही उन कारणों में एक है जिसकी वजह से सेवाओं में ग्रामीण लोग अधिक नहीं होते। सरकार के अधीन सेवाओं तथा नौकरियों की जो शान इस समय बनी है उसकी शुरूआत केवल हाल ही में हुई है। यही कारण है कि हमारे राष्ट्रपिता ने सदैव ही इस स्वस्थ सिद्धांत के अपनाये जाने की आवश्यकता तथा वांछनीयता पर बदल दिया कि "गांवों को लौट चलो"। वास्तव में वह सदैव इस बात के पक्षधर रहे कि सरकारी नौकरी के प्रति जो मोह उत्पन्न हो चुका है, उसे निश्चय ही समाप्त किया जाना चाहिये तथा शहरी जीवन के प्रति हम जो आकर्षण अनुभव करते हैं उसे रोकना होगा। गुरुत्वाकर्षण केंद्र अब शहरी क्षेत्र नहीं अपितु ग्रामीण क्षेत्र होना चाहिये। यही एक तरीका है जिससे कि हम अपनी समस्या का समाधान कर सकते हैं। यदि इसके बदले हम लोगों के कुछ वर्गों को प्राथमिकता देते हैं, तो हम केवल वही खेल खेल रहे होंगे जो कि विदेशी शासक अपनी खातिर तथा अपने प्रयोजनों को सिद्ध करने की खातिर हमारे द्वारा खेले जाने की अपेक्षा रखते थे। अत: मेरा विनम्र निवेदन है कि केवल एक सिद्धांत जिससे कि लोक सेवा आयोग का मार्गदर्शन होना चाहिये और जो कि लोक सेवा आयोग के सृजन का आधार है, वह केवल मात्र योग्यता का सिद्धांत ही होना चाहिये।

मैं यहां कुछ शब्द श्री नज़ीरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तुत किये गये संशोधन के बारे में कहना चाहता हूं। उन्होंने इस अनुच्छेद के उप-खंड (3) में प्रयुक्त "शासक" पर आपत्ति उठाई है और अपनी टिप्पणियों को उचित ठहराने के लिये उन्होंने अनुच्छेद 281 की ओर निर्देश किया है जिसमें कि "राज्य" शब्द की परिभाषा दी गयी है। उनका कहना है कि इस परिभाषा में केवल वे ही राज्य शामिल हैं। जो कि प्रथम अनुसूची के भाग 1 में विनिर्दिष्ट हैं। निवेदन है कि हमने अभी अनुच्छेद 281 तथा 282 पर विचार नहीं किया है। अत: यह अत्यंत स्वाभाविक तथा आवश्यक है कि जब हम इन अनुच्छेदों पर विचार करना आरंभ करेंगे, तो भाग 3 में उल्लिखित राज्य भी शामिल किये जा सकेंगे। और इस प्रकार उन्होंने अपने संशोधन के बारे में जो टिप्पणियां की हैं, वे मान्य नहीं हैं।

महोदय, इन शब्दों के साथ मैं अपनी बात समाप्त करता हूं।

***श्री बी.आई. मुनिस्वामी पिल्लै:** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं अपने मित्र माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत किये गये संशोधन का समर्थन करता हूं।

इस बात से सभी सहमत हैं कि संघ तथा राज्यों दोनों में लोक सेवा आयोग होना चाहिये। परंतु मेरा विचार है कि इस महान सदन का यह कर्तव्य अवश्य ही है कि यह स्पष्ट शब्दों में यह बताये कि क्या लोक सेवा आयोग उसी रूप में जारी रहेंगे जिस रूप में यह विगत समय में रहे हैं अथवा क्या उनका स्वरूप भविष्य में बेहतर होना चाहिये। जहां तक प्रतिनिधित्वविहीन समुदायों तथा अल्पसंख्यकों का संबंध है हमारी अब तक की जानकारी के अनुसार लोक सेवा आयोगों के कृत्य इतने संतोषप्रद नहीं रहे हैं। भारतीय प्रशासनिक सेवा तथा भारतीय पुलिस सेवा में हाल में हुई भर्ती हमारे समक्ष इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि इन अभागे समुदायों के प्रति न्याय नहीं किया गया है। यद्यपि प्रांतों में कहीं-कहीं मंत्री तो हैं परंतु वे सेवाओं के संबंध में निस्सहाय हैं। यह ठीक ही कहा गया है कि सेवा प्रशासन की आत्मा है। हम सब इस बात से सहमत हैं कि सर्वोत्तम व्यक्ति उपलब्ध होने चाहियें; परंतु लोक सेवा आयोग के कार्यकरण में जो होता है वह यह है कि चाहे अनुसूचित जाति के किसी व्यक्ति ने सभी अपेक्षित परीक्षाएं पास कर ली हों, परन्तु यह बता बात आती है कि लोक सेवा आयोग कहता है कि वह उस पद के लिये उपयुक्त नहीं है। सरकार के समुदाय संबंधी आदेश के अनुसार, उस व्यक्ति विशेष को छोड़ दिया जाता है तथा अगले समुदाय के व्यक्ति को वह पद ग्रहण करने के लिये बुला लिया जाता है यह सब कुछ न केवल उस प्रांत में हो रहा है जहां कि मैं रहता हूं, बल्कि संघ लोक सेवा आयोग में भी हो रहा है। वास्तव में मैं जानता हूं कि हरिजन समुदाय के व्यक्ति हालांकि अच्छे अंक प्राप्त किये हुये होते हैं तथा उनकी अपेक्षित शैक्षिक योग्यता भी होती है, परंतु किसी न किसी बहाने उन्हें अवसर नहीं दिया जाता। मेरी यह विनम्र राय है कि इस आयोग का भावी दृष्टिकोण और अधिक बेहतर होना चाहिये। इस देश में सामुदायिक भेद-भावों के कारण इन समुदायों में से कुछ समुदायों को हालांकि वे पद धारण करने के लिए प्रबुद्ध तथा योग्य हो सकते हैं, वह अवसर नहीं दिया गया जो उन्हें देय था। सरकार के अनेक विभागों के लिये, उम्मीदवारों की सूचियां तैयार की जाती हैं जिनमें से किस अंततोगत्वा चयन किया जाता है। हालांकि आयोग व्यक्तियों का चयन कर सकता है, पर वे उस व्यक्ति की उपयुक्तता अथवा अनुपयुक्तता के बारे में कुछ कह देते हैं और इस प्रकार सर्वोत्तम व्यक्ति को देश में आने से वंचित रखते हैं। इस तरह की बात से इन अभागे समुदायों के युवा व्यक्तियों को घोर निराशा हुई है। मुझे मालूम है कि डॉ. अम्बेडकर विभिन्न सेवाओं में अनुसूचित जातियों के लिये कुछ प्रतिशतता निर्धारित करा पाये थे। परंतु, यदि हम वर्तमान स्थिति का मूल्यांकन करे तो यह पायेंगे कि केंद्र तथा राज्यों दोनों में अनुसूचित जातियों के पदस्थ व्यक्तियों की संख्या नगण्य है। भावी लोक सेवा आयोगों के स्वरूप को बेहतर बनाने के लिए मैं इस सदन से अनुरोध करता हूं कि उचित निर्देश अवश्य ही जारी किये जाएं।

***अध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं इस विषय पर कुछ कहने की आवश्यकता नहीं समझता।

***अध्यक्ष:** मैं संशोधन मतदान के लिये रखता हूं। प्रथम संशोधन श्री नज़ीरुद्दीन

अहमद द्वारा प्रस्तुत किया गया संशोधन संख्या 64 है। वह इसके स्थान पर एक अन्य संशोधन लाये हैं जो कि मैं अब आपको पढ़कर सुनाता हूं।

"कि सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 284 में, खंड 2 के स्थान पर वह खंड रखा जाये:—

(2) Two or more States may by resolution in their Legislative Assemblies or where there are two Houses, in both the Houses, agree that there shall be one Public Service Commission for that group of States."

['(2) दो अथवा अधिक राज्य अपनी विधान सभाओं में अथवा जहां दो सदन हैं वहां दोनों सदनों में संकल्प पारित करके करार कर सकेंगे कि राज्यों के उस समूह के लिए एक ही लोक सेवा आयोग होगा।']

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब संशोधन संख्या 65।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** वह इस बात को देखते हुए अब उत्पन्न नहीं होता।

***अध्यक्ष:** तब मैं संशोधन संख्या 65 मतदान के लिए रखता हूं।

प्रश्न यह है कि:

"कि संशोधनों के लिये संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित अनुच्छेद 284 के खंड 3 में 'Or ruler अथवा शासक)' शब्दों को निकाल दिया जाए।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब मैं इस प्रस्ताव को मतदान के लिए रखता हूं जो कि डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत किया गया है। क्या सर्वश्री चालिहा तथा लक्ष्मीनारायण साहू यह चाहेंगे कि मैं उन दोनों पैराग्राफों को मतदान के लिए अलग-अलग रखूं?

***श्री कुलधर चालिहा:** नहीं, श्रीमान।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 284 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाए:—

'284 (1) Subject to the Provisions of this article, there shall be a Public Service Commission for the Union and a Public Service Commission for each State.

(2) Two or more States may agree that there shall be one Public Service Commission for that Group of States, and if a resolution to the effect is passed by the House or, where there are two Houses, by each House of the Legislature of

[अध्यक्ष]

each of those States, Parliament may by law provide for the appointment of a Joint Public Service Commission (referred to in this Chapter as Joint Commission) to service the needs of those States.

(2a) Any such law as aforesaid may contain such incidental and consequential provisions as may appear necessary or desirable for giving effect to the purposes of clause (2) of this article.

(3) The Public Service Commission for the Union, if requested so to do by the Governor or Ruler of a State, may, with the approval of the President agree to serve all or any of the needs of the State.

(4) References in this Constitution to the Union Public Service Commission or a State Public Service Commission shall, unless the context otherwise requires, be construed as references to the Commission serving the needs of the Union or, as the case may be, the State as respects the particular matter in question."

['284 (1) इस अनुच्छेद के उपबंधों के अधीन रहते हुये, संघ के लिये लोक सेवा आयोग तथा प्रत्येक राज्य के लिए एक लोक सेवा आयोग होगा।

(2) दो या अधिक राज्य यह करार कर सकेंगे कि राज्यों के उस समूह के लिये एक ही लोक सेवा आयोग होगा तथा यदि उस उद्देश्य का संकल्प उन राज्यों में से प्रत्येक के विधानमंडल के सदन द्वारा अथवा जहां दो सदन हैं, वहां प्रत्येक सदन द्वारा पारित कर दिया जाता है, तो संसद उन राज्यों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए विधि द्वारा संयुक्त लोक सेवा आयोग (जो इस अध्याय में "संयुक्त आयोग" के नाम से निर्दिष्ट है) की नियुक्ति का उपबंध कर सकेगी।

(2क) उपरोक्त विधि में ऐसे प्रासंगिक तथा आनुषंगिक उपबंध भी अंतर्विष्ट हो सकेंगे जैसे कि इस अनुच्छेद के खंड (2) के प्रयोजनों को सिद्ध करने के लिये आवश्यक या वांछनीय हों।

(3) यदि किसी राज्य का राज्यपाल या शासक, संघ के लोक सेवा आयोग से ऐसा करने की प्रार्थना करे तो राष्ट्रपति के अनुमोदन से वह उस राज्य की सब या किन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये कार्य करना स्वीकार कर सकेगा।

(4) यदि प्रसंग से अन्यथा अपेक्षित न हो, तो इस संविधान में संघ के लोक सेवा आयोग अथवा किसी राज्य के लोक सेवा आयोग के निर्देशों को ऐसे आयोग के प्रति निर्देश समझा जायेगा जो प्रश्नास्पद किसी विशेष विषय के बारे में यथास्थिति संघ की अथवा राज्य की आवश्यकताओं की पूर्ति करता हो।']

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 284, संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 285

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 285–डॉ. अम्बेडकर।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** महोदय, मेरा एक व्यवस्था का प्रश्न है। अध्यक्ष महोदय, आप कृपया यह देखेंगे कि यह स्वयं संविधान के लिये ही संशोधन है, किसी संशोधन के लिये संशोधन नहीं है, और इसलिये नियमों के अंतर्गत इसको अनुमति नहीं दी जानी चाहिये। विशेष मामले में हमने अवश्य ही कुछ अपवाद किये हैं, परंतु यह देखा जा रहा है कि ये अपवाद अब नियम ही बनते जा रहे हैं। इसलिये मेरा निवेदन है कि इस संशोधन को तकनीकी आधार पर ही नियम विरुद्ध घोषित किया जाना चाहिये। और फिर सुविधा का प्रश्न भी है। मेरे विचार में अपने स्वरूप में यह संशोधन अत्यंत आपत्तिजनक है। यहां प्रारूप संविधान के अनुच्छेद 285 के खंडों में कुछ प्रकार के परिवर्धन तथा परिवर्तन करके उसे केवल दोहराया गया है। ये संशोधन मूल अनुच्छेद के लिये संशोधनों के रूप में आने चाहिए थे। इसके बदले नये विचारों को सम्मिलित करके अथवा अंतःस्थापित करके पूरा अनुच्छेद लिख दिया गया है तथा पुराने खंडों तथा संशोधनों को नए अनुच्छेद के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह पता चलाने के लिये बहुत अधिक समय लगता है कि कौन-कौन से परिवर्तन किए गये हैं।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** जैसे कि हिंदू कोड बिल में हुआ।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** जैसा कि डॉ. देशमुख ने ठीक ही कहा–हिन्दू कोड बिल की तरह। पुराने खंडों तथा नये विचारों को आपस में मिला दिया गया है तथा जहां-तहां आवश्यक अंतः स्थापन करके उन्हें नए खंडों के रूप में प्रस्तुत कर दिया गया है। यह पता चला पाना अत्यंत कठिन है कि वास्तव में कौन-कौन से परिवर्तन किये गये हैं। खंड (2) में कई स्थानों पर परिवर्तन किये गये हैं। और फिर अनुच्छेद 285(क) है जो कि बिल्कुल ही नया है। और फिर अनुच्छेद 285(ख) पुराने अनुच्छेद 285 के भागों से बनाया गया है तथा इस अनुच्छेद का परंतुक बिल्कुल ही नया है। इसे देखकर यह पता चलता है कि यह अनुच्छेद 285(3) का प्रतिरूप है, परंतु अब इसे नया अनुच्छेद बना दिया गया है जिसका स्वरूप बिल्कुल ही नया है। इस अनुच्छेद का खंड (घ) बिल्कुल ही नया है। मेरे विचार में इन परिवर्तनों को समझने का प्रयास सभी के लिये कठिन है। अतः मैं इन पर केवल इसी कारण आपत्ति नहीं कर रहा कि ये संशोधन नियमों की अवहेलना करते हैं, बल्कि इस कारण भी आपत्ति कर रहा हूं कि इनका स्वरूप ऐसा है जो कि आसानी से समझ में नहीं आता तथा उन्हें स्वयं संविधान में ही संशोधन के रूप में व्यक्त किया जाना चाहिये था। उससे माननीय सदस्यों को इन परिवर्तनों को समझने में आसानी रहती।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** यह पहली बार नहीं है जबकि मेरे मित्र ने व्यवस्था का प्रश्न उठाया है। प्रारूप समिति को प्रक्रिया नियमों की तकनीकी

बातों से परे रहने के संबंध में आपकी सहर्ष अनुमति रही है तथा इसलिए मेरा निवेदन है कि इस मामले में भी आप हमें आगे कार्यवाही करने की अनुमति देने की कृपा करेंगे।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** महोदय, मैं डॉ. अम्बेडकर के इस रवैये का विरोध करता हूं। महोदय आपने उन्हें कुछ विशेषाधिकार दिया है और वह उसका दुरुपयोग कर रहे हैं। वह यह बता सकते हैं तथा उन्हें अवश्य ही बताना भी चाहिये कि वह मूल प्रारूप अनुच्छेदों में किस प्रकार का ठोस और विशिष्ट परिवर्तन करना चाहते हैं। और उन्हें उस प्रकार कार्यवाही नहीं करनी चाहिये जिस तरीके से कि उन्होंने हिंदू कोड बिल के संबंध में की थी तथा उन्हें यह विशिष्ट रूप से बताये बिना कोई भी परिवर्तन नहीं करना चाहिये कि मूल प्रारूप की तुलना में कहां-कहां कितना परिवर्तन किया गया है।

***श्री एम. अनंतशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल): मेरे जिन मित्रों ने व्यवस्था का प्रश्न उठाया है, उन्हें मालूम होना चाहिये कि लोक सेवा आयोग की पूरी योजना में ही परिवर्तन पर दिया गया है तथा ये परिवर्तन पारिणामिक हैं। अतः यदि अन्यों में परिवर्तन नहीं किया गया होता, तो संभवतया इसके लिये किसी परिवर्तन की आवश्यकता न रहती। इन परिस्थितियों में ये आपत्तियां मान्य नहीं हैं।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** मेरा निवेदन है कि प्रत्येक संशोधन मूल प्रारूप से संबंधित होना चाहिये जो कि परिचालित किया गया है।

***अध्यक्षः** जहां तक प्रारूप समिति का संबंध है, मैंने कुछ छूट दी है क्योंकि अनेक कठिन अनुच्छेद, जिनके बारे में कि मतभेद की संभावना हो सकती थी अथवा जिन पर विचार किये जाने की आवश्यकता थी उन्हें पुनर्विचार के लिये छोड़ दिया गया था और यदि पुनर्विचार के परिणामस्वरूप, प्रारूप समिति नए अनुच्छेद प्रस्तुत करना चाहती है, तो मैं नहीं समझता कि मैं नये अनुच्छेदों को हमारे समक्ष प्रस्तुत किये जाने के मार्ग में किन्हीं तकनीकी बातों के कारण बाधक बनूं। अतः मैं इन अनुच्छेदों को प्रस्तुत करने की अनुमति देता हूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** अनेक अनुच्छेद हैं तथा इन अनुच्छेदों को अलग-अलग रखा जाना चाहिये।

***अध्यक्षः** यह एक बिल्कुल अलग बात है तथा हम उन पर अलग-अलग चर्चा कर सकते हैं। डॉ. अम्बेडकर स्पष्ट कर सकते हैं कि अलग-अलग अनुच्छेद क्यों बनाये गये। आप उन्हें एक साथ प्रस्तुत करें तथा मतदान के समय हम उन्हें अलग-अलग ले सकते हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** हां, उन्हें अलग-अलग रखा जा सकता है।

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 285 के स्थान पर ये अनुच्छेद रखे जाएं:—

'285. (1) The Chairman and other members of a Public Service Commission shall be appointed in the case of the Union Commission or a Joint Commission by the

Appointment and term of office of members.

President, and in the case of a State Commission, by the Governor or Ruler of the State:

Provided that at least one-half of the members of every Public Service Commission shall be persons who at the dates of their respective appointments have held office for at least ten years either under the Government of India or under the Government of a State, and in computing the said period of ten years any period before the commencement of this Constitution during which a person has held office under the Crown shall be included.

(2) A member of a Public Service Commission shall hold office for a term of six years from the date on which he enters upon his office or until he attains, in the case of the Union Commission, the age of sixty-five years, and in the case of a State Commission or a Joint Commission, the age of sixty years, whichever is earlier:

Provided that—

(a) a member of a Public Sevice Commission may be writing under his hand addressed, in the case of the Union Commission or a Joint Commission, to the President and in the case of a State Commission, to the Governor or Ruler of the State, resign his office.

(b) a member of a Public Service Commission may be removed from his office in the manner provided in clause (1) or clause (3) or article 285-A of this Constitution.

(3) A person who holds office as a member of a Public Service Commission shall, on the expiration of his term of office, be ineligible for re-appintment of that office.

285A (1) Subject to the provisions of clause (3) of this article, the Chairman or any other member of Public Service Commission shall only be removed from office by order of the President on the ground of misbehaviour after the Supreme Court on a reference being made to it by the President has, on inquiry held in accordance with the procedure prescribed in that behalf under article 121 of this Constitution, reported that the Chairman or such other member, as the case may be, ought on any such ground be removed.

Removal and suspension of a member of a Public Service Commission.

(2) The President in the case of the Union Commission or a Joint Commission and the Governor or Ruler in the case of a State Commission may suspend from office the Chairman

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

or any other member of the Commission in respect of whom of reference has been made to the Supreme Court under clause (1) of this article until the President has passed orders on receipt of the report of the Supreme Court on such reference.

(3) Notwithstanding anything contained in clause (1) of this article, the President may, be order, remove from office the Chairman or any other member of a Public Service Commission if the Chairman or, such other member, as the case may be,

(a) is adjudged an insolvent; or

(b) engager during his term of office in any paid employment outside the duties of his office."

सदस्यों की नियुक्ति तथा पदावधि

'285. (1) लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष और अन्य सदस्यों की नियुक्ति, यदि वह संघ आयोग या संयुक्त आयोग है तो, राष्ट्रपति द्वारा तथा यदि वह राज्य आयोग है, तो राज्य के राज्यपाल या शासक द्वारा की जायेगी:

परंतु प्रत्येक लोक सेवा आयोग के सदस्यों में से कम से कम आधे ऐसे लोग होंगे जो अपनी-अपनी नियुक्तियों की तारीख पर भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन कम से कम दस वर्ष तक पद धारण कर चुके हैं, तथा उक्त दस वर्ष की कालावधि की संगणना में ऐसी कालावधि भी शामिल होगी जिसमें संविधान के प्रारंभ से पूर्व किसी व्यक्ति ने सम्राट के अधीन पद धारण किया है।

(2) लोक सेवा आयोग का सदस्य अपने पद-ग्रहण की तारीख से छः वर्ष की अवधि तक अथवा यदि यह संघ आयोग है तो, पैंसठ वर्ष की आयु को प्राप्त होने तक तथा यदि वह राज्य आयोग या संयुक्त आयोग है तो साठ वर्ष की आयु को प्राप्त होने तक जो भी इनमें से पहले हो अपना पद धारण करेगा:

परंतु–

(क) लोक सेवा आयोग का कोई सदस्य यदि वह संघ आयोग या संयुक्त आयोग है तो राष्ट्रपति को तथा यदि वह राज्य-आयोग है तो राज्य के राज्यपाल या शासक को सम्बोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा पद को त्याग सकेगा;

(ख) लोक सेवा आयोग का कोई सदस्य अपने पद से अनुच्छेद 285-क के खंड (1) या खंड (3) में उपबंधित रीति से हटाया जा सकेगा।

(3) कोई व्यक्ति जो लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में पद धारण करता है, अपनी पदावधि की समाप्ति पर पुनर्नियुक्ति के लिए अपात्र होगा।

लोक सेवा आयोग के किसी सदस्य का हटाया जाना या निलम्बित किया जाना

285क (1) इस अनुच्छेद के खंड (3) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, लोक सेवा आयोग का सभापति या अन्य कोई सदस्य पद से केवल राष्ट्रपति द्वारा कदाचार के आधार पर दिए गये उस आदेश पर ही हटाया जायेगा, जोकि उच्चतम न्यायालय से राष्ट्रपति द्वारा पृच्छा किये जाने पर उस न्यायालय द्वारा इस संविधान के अनुच्छेद 121 के अधीन उस विहित प्रक्रिया के अनुसार की गयी जांच पर उस न्यायालय द्वारा किये गए इस प्रतिवेदन के पश्चात् कि यथास्थिति, सभापति या ऐसे किसी सदस्य को, ऐसे किसी आधार पर हटा दिया जाये, दिया गया है।

(2) आयोग के सभापति अन्य किसी सदस्य को जिसके संबंध में इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन उच्चतम न्यायालय से पृच्छा की गयी है और राष्ट्रपति, यदि वह संघ आयोग या संयुक्त आयोग है, तथा राज्यपाल या शासक, यदि वह राज्य आयोग है, उसको पद से तब तक के लिए निलम्बित कर सकेगा जब तक कि ऐसी पृच्छा की गयी बात पर उच्चतम न्यायालय के प्रतिवेदन के मिलने पर राष्ट्रपति अपना आदेश न दे।

(3) इस अनुच्छेद के खंड (1) में अंतर्विष्ट बात के होते हुये भी यदि यथा-स्थिति लोक सेवा आयोग का सभापति या कोई दूसरा सदस्य—

(क) दिवालिया, न्यानिर्णीत हो जाता है; अथवा

(ख) अपनी पदावधि में अपने पद के कर्तव्यों से बाहर कोई वैतनिक नौकरी करता है, अथवा, और यहां मैं (ग) के रूप में तीसरी बात जोड़ना चाहता हूं:—

(c) is in the opinion of the President unfit to continue in office by reason of infirmity of mind or body.

(4) For the purpose of clause (1) of this article, the Chairman or any other member of a Public Service Commission may be deemed to the guilty of misbehaviour if he is or becomes in any way concerned or interested in any contract or agreement made by or on behalf of the Government of India or the Government of a State or participates in any way in the profit thereof or in any benefit from emoluments arising therefrom otherwise than as a member and in common with the other members of any incorporated company.

Power to make regulations as to conditions of service of members and staff of the Commission.

285.B. In the case of the Union Commission or a Joint Commission, the President and in the case of a State Commission, the Governor or Ruler of the State, may by

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

regulation—

(a) determine the number of members of the Commission, and their conditions of service: and

(b) make provision with respect to the number of members of the staff of the Commission and their conditions of service:

Provided that the conditions of service of a members of a Public Service Commission shall not be altered to his disadvantage after his appointment.

285. C. On ceasing to hold office—

Bar to the holding of office by members of Commissions on ceasing to be such members.

(a) the Chairman of the Union Public Service Commission shall be ineligible for further employment either under the Government of India or under the Government of a State;

(b) the Chairman of a State Public Service Commission shall be eligible for appointment as the Chairman or any other member of the Union Public Service Commission or as the Chairman of any other State Public Service Commission but not for any other emplyment either under the Government of India or under the Government of a State:

(c) a member other than the Chairman of the Union Public Service Commission shall be eligible for appointment as the Chairman of the Union Public Service Commission or as the Chairman of a State Public Service Commission but not for any other employment either under the Government of India or under the Government of a State:

(d) a member other than the Chairman of the Union Public Service Commission shall be eligible for appointment as the Chairman or any other member of the Union Public Service Commission or as the Chairman of that or any other State Public Service Commission, but not for any other employment either under the Government of India or under the Government of a State:

['(ग) राष्ट्रपति की राय में मानसिक या शारीरिक दौर्बल्य के कारण अपने पद पर रह आने के लिये अयोग्य है,

तो सभापति या ऐसे अन्य सदस्य को राष्ट्रपति आदेश द्वारा अपने पद से हटा सकेगा।

(4) इस अनुच्छेद के खंड (1) के प्रयोजनों के लिए लोक-सेवा आयोग का सभापति या अन्य कोई सदस्य कदाचार का अपराधी समझा जा सकता है यदि यह भारत सरकार के या राज्य की सरकार के द्वारा, या ओर से की गई किसी संविदा या करार में निगमित समवाय के सदस्य के नाते तथा उसके अन्य सदस्यों के साथ-साथ के सिवाय, किसी प्रकार से भी संपृक्त या हितसम्बद्ध है या हो जाता है अथवा किसी प्रकार के उसके लाभ में अथवा तदुत्पन्न किसी फायदे या उपलब्धि में भाग लेता है।

आयोग के सदस्यों और कर्मचारीवृन्द को सेवाओं की शर्तों के बारे में विनियम बनाने की शक्ति

285.-ख. संघ आयोग या संयुक्त आयोग के बारे में राष्ट्रपति तथा राज्य आयोग के बारे में उस राज्य का राज्यपाल या शासक विनिमयों द्वारा

(क) आयोग के सदस्यों की संख्या तथा उनकी सेवाओं की शर्तों का निर्धारण कर सकेगा, तथा

(ख) आयोग के कर्मचारीवृन्द के सदस्यों की संख्या तथा उनकी सेवा की शर्तों के संबंध में उपबन्ध कर सकेगा:

परंतु लोक सेवा आयोग के सदस्य की सेवा की शर्तों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसको अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जायेगा।

285.-ग. पद पर न रहने पर—

आयोग के सदस्यों द्वारा ऐसे सदस्य न रहने पर पद के धारण करने पर रोक

(क) संघ लोक सेवा आयोग का सभापति भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी भी और नौकरी के लिये अपात्र होगा;

(ख) राज्य के लोक-सेवा आयोग का सभापति संघ लोक सेवा आयोग के सभापति या अन्य सदस्य के रूप में अथवा किसी अन्य राज्य के लोक सेवा आयोग के सभापति के रूप में नियुक्त होने का पात्र होगा, किन्तु भारत सरकार के या किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी अन्य नौकरी के लिए पात्र न होगा;

(ग) संघ लोक सेवा आयोग के सभापति के अतिरिक्त कोई अन्य सदस्य संघ लोक सेवा आयोग के सभापति के रूप में अथवा राज्य लोक सेवा आयोग के सभापति के रूप में नियुक्त होने का पात्र होगा, किन्तु भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी अन्य नौकरी का पात्र न होगा;

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(घ) किसी राज्य के लोक सेवा आयोग के सभापति के अतिरिक्त अन्य कोई सदस्य संघ लोक सेवा आयोग के सभापति कि किसी अन्य सदस्य के रूप में अथवा उसी या किसी अन्य राज्य लोक सेवा आयोग के सभापति के रूप में नियुक्त होने का पात्र होगा, किन्तु भारत सरकार के या किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी अन्य नौकरी के लिए पात्र न होगा।']

महोदय, ये ऐसे खंड हैं जिनका संबंध लोक सेवा आयोगों, उनके सदस्यों की पदावधि एवं अर्हताओं तथा निरर्हताओं तथा उनके हटाये जाने और निलम्बित किये जाने से हैं। मैं इन अनुच्छेदों में समाविष्ट मुख्य बातें सभा के समक्ष संक्षिप्त रूप में रखना चाहता हूं।

पहली बात लोक सेवा आयोग की पदावधि के बारे में है इसका प्रावधान अनुच्छेद 285 में किया गया है। इस अनुच्छेद में समाविष्ट प्रावधानों के अनुसार लोक-सेवा आयोग के सदस्य की पदावधि छः वर्ष निर्धारित की गयी है अथवा संघ-आयोग के मामले में 65 वर्ष की आयु को प्राप्त हो जाने तक और राज्य-आयोग के मामले में 60 वर्ष की आयु को प्राप्त हो जाने तक निर्धारित की गयी है। यह पदावधि के बारे में है।

अब मैं लोक-सेवा आयोग के सदस्यों के हटाए जाने के विषय पर आता हूं। इसका प्रावधान अनुच्छेद 285-क में किया गया है। इस अनुच्छेद के प्रावधानों के अंतर्गत लोक-सेवा आयोग का सदस्य कदाचार सिद्ध होने पर राष्ट्रपति द्वारा हटाया जा सकेगा। वह स्वतः—अनर्हता के आधार पर भी हटाया जा सकेगा। यह स्वतः-अनर्हता तीन कारणों से हो सकती है। एक कारण है दिवालियापन। दूसरा कारण है किसी अन्य नौकरी में लगना तथा तीसरा है मानसिक या शारीरिक दौर्बल्य। कदाचार के संबंध में उपबंध कुछ-कुछ अनूठे है। माननीय सदन को याद होगा कि उच्च न्यायालय अथवा उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को हटाये जाने के मामले में हमारे द्वारा पहले पास किये जा चुके अनुच्छेदों में यह प्रावधान है कि वे सदाचार के दौरान अपने पदों पर बने रहेंगे तथा जब तक कि सभा के दोनों सदनों तथा इस हेतु एक संकल्प पास नहीं किया जाता तब तक वे हटाये नहीं जा सकेंगे। ऐसा महसूस किया गया है कि संघ लोक सेवा आयोग के सदस्यों को हटाये जाने के लिये इतने कठोर तथा बड़े प्रावधान का उपबंध करना अनावश्यक है। परिणामस्वरूप इस अनुच्छेद में यह प्रावधान किया गया है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को हटाये जाने के लिये भारत शासन अधिनियम में समाविष्ट उपबंध लोक-सेवा आयोग के सदस्यों को उतनी ही सुरक्षा, उतना ही संरक्षण देने के लिए पर्याप्त होंगे। मेरे विचार में सभा को याद होगा कि भारत शासन अधिनियम में समाविष्ट उपबंधों में फैडरल न्यायालय के न्यायाधीश अथवा उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाये जाने के लिये जिस बात की आवश्यकता है वह है उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के मामले में फैडरल न्यायालय के न्यायाधीशों द्वारा की गयी जांच अथवा फैडरल न्यायालय के न्यायाधीश के मामले में प्रिवी कौंसिल द्वारा की गई जांच और यह रिपोर्ट किये जाने पर कि कदाचार का मामला हुआ है, गवर्नर जनरल फेडरल न्यायालय के न्यायाधीश अथवा उच्च न्यायालय के न्यायाधीश

को हटा सकेगा। हमने लोक-सेवा आयोग के सदस्य को जहां कहीं कदाचार का मामला हो, हटाये जाने के सम्बन्ध में वही उपबंध रखा है।

जहां तक स्वत:-अनर्हताओं का संबंध है, मेरे विचार में विवाद का कोई भी कारण नहीं होना चाहिये क्योंकि यह स्पष्ट है कि यदि लोक-सेवा आयोग का कोई सदस्य दिवालिया हो जाता है, तो उसकी ईमानदारी पर तनिक भी भरोसा नहीं किया जा सकता और इसलिए यह स्वत: अनर्हता मानी जानी चाहिये। इसी प्रकार यदि लोक-सेवा आयोग का कोई सदस्य, जोकि निस्संदेह राज्य का पूर्णकालिक अधिकारी है, अपने अर्तव्य का यथासंभव पूर्णरूपेण निर्वहन करने तथा अपना सारा समय लगाने के बजाय अपने किसी अन्य नियोजन में अपना कुछ समय लगाता है, तो वह भी स्वत:-अनहर्ता का आधार होगा। इसी प्रकार तीसरी अनहर्ता, अर्थात् कि यह मानसिक तथा शारीरिक रूप से दुर्बल हो चुका है, भी किसी प्रकार के विवाद के बिना स्वत:—अनर्हता का पक्का मामला माना जा सकता है। सदन के सदस्यों को यह भी याद होगा कि अनुच्छेद 285-क के पाठ में एक प्रावधान है कि उच्च न्यायालय द्वारा की जा रही जांच के दौरान लोक-सेवा आयोग का सदस्य निलम्बित रहेगा। मेरे विचार में यह प्रावधान आवश्यक है। यदि राष्ट्रपति का यह विचार हो कि कोई सदस्य कदाचार का दोषी है, तो यह वांछनीय नहीं होगा कि वह सदस्य लोक-सेवा आयोग के सदस्य के रूप में काम करता रहे, जब तक कि उच्च न्यायालय द्वारा उसके पक्ष में रिपोर्ट देकर उसके आचरण को दोषमुक्त नहीं किया जाता।

अब मैं अन्य महत्वपूर्ण बात पर आता हूं। जिसका संबंध कि लोक-सेवा आयोग-संघ तथा राज्य सेवा आयोग दोनों-के सदस्यों को नौकरी अथवा नौकरी के लिए पात्रता से है। सदस्य यह देखेंगे कि अनुच्छेद 285 के खंड (3) के अनुसार हमने संघ लोक-सेवा आयोग के सभापति तथा सदस्यों को एवं राज्य लोक-सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा सदस्यों दोनों को उन्हीं पदों पर पुर्नियुक्ति के लिए अपात्र ठहराया है; जिसका अर्थ यह हुआ कि सभापति अथवा सदस्य की पदावधि एक बार समाप्त हो जाने पर, चाहे वह लोक सेवा आयोग का सभापति हो अथवा राज्य आयोग का सभापति हो, हमने यह कहा है कि यह पुन: नियुक्त नहीं होगा। मेरे विचार में यह अत्यन्त स्वस्थ प्रावधान है क्योंकि पुनर्नियुक्ति अथवा उसी नियुक्ति में बने रहने के लिए यदि कोई आशा रखी जाती है तो वह एक प्रकार के प्रलोभन का काम कर सकती है कि जिसके कारण कि सदस्य उसी निष्पक्षता से कार्य न करने के लिए प्रेरित हो सकता है जिसकी कि उसके कर्तव्य के निर्वहन में उससे आशा की जाती है। अत: यह एक बुनियादी निषेध है जिसका कि प्रारूप अनुच्छेद में प्रावधान किया गया है।

और फिर दूसरी बात यह है कि अनुच्छेद 285-ग के अनुसार यह प्रावधान भी है कि उनमें से कोई किन्हीं अन्य पदों पर नियुक्ति का पात्र नहीं होगा। अत: दोहरी अनहर्ता। अपने पदों पर जारी रहने के लिये कोई अनुमति नहीं है और न ही तो किन्हीं अन्य पदों पर नियुक्त का प्रावधान है। अब केवल अपवाद के कुछ मामले, जिनमें उनकी नियुक्ति की जा सकती है, इस प्रकार है—

राज्य लोक-सेवा आयोग के सभापति को संघ आयोग का सभापति अथवा सदस्य अथवा किसी अन्य राज्य आयोग का सभापति बनने की अनुमति है।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

दूसरे, संघ आयोग का सदस्य संघ आयोग अथवा किसी अन्य राज्य आयोग का सभापति बन सकता है।

तीसरी, राज्य आयोग के सदस्य संघ आयोग के सभापति अथवा सदस्य या राज्य आयोग के सभापति बन सकते हैं।

दूसरे शब्दों में अपवाद इस प्रकार हैं, अर्थात् कि कोई व्यक्ति जो कि संघ लोक सेवा आयोग का सदस्य है वह राज्य सेवा आयोग का सदस्य बन सकता है, अथवा राज्य लोक सेवा आयोग का कोई सदस्य संघ लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष बन सकता है अथवा संघ लोक सेवा आयोग का सदस्य बन सकता है। इस बारे में ध्यान देने योग्य मुख्य बात यह है कि राज्य आयोग का न सभापति तथा न ही सदस्य उसी राज्य के अंतर्गत नौकरी नहीं ले सकता। किसी अन्य राज्य द्वारा उसे सभापति नियुक्त किया जा सकता है अथवा उसे केंद्रीय सरकार द्वारा संघ लोक सेवा आयोग का सभापति अथवा संघ लोक सेवा आयोग का सदस्य नियुक्त किया जा सकता है। इसका उद्देश्य यह है कि राज्य के उसी पद पर निरंतर नौकरी देने अथवा किसी अन्य पद पर नौकरी देने के लिए किसी प्रकार का संरक्षण प्रदान करने की अनुमति न रहे ताकि यह आशा की जा सके कि इन प्रावधानों से आयोग के सदस्य इतने स्वाधीन रहें जितनी कि उनसे आशा की जा जाती है।

मेरे विचार में ऐसी कोई अन्य बात नहीं है जिसके स्पष्टीकरण की आवश्यकता हो।

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू:** संयुक्त आयोग के सदस्यों के बारे में क्या है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** संयुक्त आयोग एक राज्य आयोग है। इसकी परिभाषा अनुच्छेद 284 के खंड (4) में की गई है।

***डॉ. मनमोहन दास:** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): मैं चाहता हूं कि अनुच्छेद 285-क की कुछ बातों पर और प्रकाश डाला जाए। यदि राष्ट्रपति द्वारा निर्देश दिये जाने पर उच्चतम न्यायालय यह प्रतिवेदन करता है कि लोक सेवा आयोग के सभापति अथवा इसके किसी अन्य सदस्य को हटाया जाना चाहिये तो उसे हटाना राष्ट्रपति के लिए बाध्यकारी होगा?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** निश्चय ही।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, आपने माननीय सदस्य से कहा है कि वह नये प्रारूप तथा मूल प्रारूप में अंतर के बारे में सभा को बतायें। उससे वास्तव में किए गये परिवर्तनों को उचित प्रकार से समझने में सहायता मिलती।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** यदि वाद विवाद के दौरान कोई प्रश्न उठाया जाता है, तो उसका स्पष्टीकरण मैं अपने उत्तर के समय दूंगा।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैं नहीं जानता कि मैं इसका विरोध करूं अथवा नहीं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** आपने दोनों प्रारूप अवश्य ही पढ़े होंगे। आपने केवल अल्प-विराम तथा अर्धविराम नहीं पढ़े होंगे।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों को लूंगा।

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्त प्रांत: जनरल): महोदय मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 285 के खंड (1) के परंतुक में 'one-half' (आधे) शब्द के स्थान पर 'one-third' (एक-तिहाई)' शब्द रखा जाये।"

लोक सेवा आयोग के गठन तथा कर्मचारीवृन्द का प्रश्न भारी महत्वपूर्ण हैं। वास्तव में उसके महत्व को बढ़ा-चढ़ाकर कहना संभव ही नहीं है। केंद्रीय तथा राज्य सरकारों के अंतर्गत विभिन्न पदों को भरने के लिये उम्मीदवारों का चयन करने की जिम्मेदारी संघ तथा राज्य लोक सेवा आयोगों को सौंपी जा रही है और इस दृष्टि से ये आयोग अत्यधिक महत्वपूर्ण बन जाते हैं। इन आयोगों के उचित गठन तथा इनके सदस्यों के सही चयन पर उन व्यक्तियों का उचित चयन निर्भर करता है जिन पर कि सरकार के विभिन्न विभागों में महत्वपूर्ण कर्तव्यों के निर्वहन करने की भारी जिम्मेदारी जायेगी। इस स्थिति में मेरे विचार में यह लाभकर होगा कि हम इस विषय से सम्बन्धित विभिन्न अनुच्छेदों पर विस्तार से तथा अत्यन्त सावधानीपूर्वक विचार करें।

जिस परंतुक के लिये मैंने अभी अपना संशोधन प्रस्तुत किया है, उसमें कहा गया है कि प्रत्येक लोक सेवा आयोग के आधे सदस्य ऐसे व्यक्ति होंगे जो अपनी-अपनी नियुक्ति की तारीख पर भारत सरकार या किसी राज्य सरकार के अधीन कम से कम दस वर्ष तक पद धारण कर चुके हों, आदि। महोदय, इसका अर्थ यह हुआ कि वास्तविक व्यवहार में लोक सेवा आयोगों में सरकारी सदस्य लगभग सदैव ही बहुसंख्या में रहेंगे। सामान्यतया किसी लोक सभा के सदस्यों की संख्या या तो तीन है या पांच है, इसलिए यदि तीन सदस्य हुए तो उनमें से कम से कम आधे-जिसका मतलब है कि दो सदस्य-सरकारी कर्मचारी होंगे।

केवल एक ही स्थान शेष रह जाता है जो कि ऐसे व्यक्ति द्वारा भरा जाता है जो दस वर्षों तक सरकारी कर्मचारी नहीं रहा है। इसी प्रकार यदि पांच सदस्यों का आयोग हुआ तो कम से कम तीन सदैव ही सरकारी कर्मचारी होंगे तथा इस क्षेत्र के बाहर से केवल दो ही सदस्य नियुक्त किये जा सकते हैं। मैं समझता हूं कि इस तरह से लोक सेवा आयोग में सरकारी कर्मचारियों को अनुचित प्रतिनिधित्व दिया जा रहा है। लोक सेवा आयोगों में सरकारी कर्मचारियों के दृष्टिकोण को इतना अधिक प्रतिनिधित्व नहीं दिया जाना चाहिये। यद्यपि यह आवश्यक है कि हमें दस वर्ष की सेवा वाले सरकारी कर्मचारियों के अनुभव का लाभ उठाना चाहिये, परंतु साथ ही मेरा यह भी विचार है कि सभी उम्मीदवारों के चयन में केवल उनके ही दृष्टिकोण पर निर्णय नहीं होना चाहिये और यह कि गैर-सरकारी व्यक्तियों तथा अन्य हितों के प्रतिनिधियों का भी आयोगों में उचित प्रतिनिधित्व होना चाहिए। परंतु

[श्री जसपतराय कपूर]

यदि एक सांविधिक प्रावधान द्वारा सभी आयोगों के अधिकांश सदस्य ऐसे होंगे जो सरकारी सेवा में दस वर्ष रह चुके हों, तो उपरोक्त उद्देश्य पूरा नहीं होगा।

जितनी अधिक अवधि तक कोई व्यक्ति सरकारी सेवा में रहता है उतना ही अधिक वह रूढ़िवादी बन जाता है तथा उसमें उस वर्ग का सनकीपन, स्वेच्छाचारिता और यहां तक कि स्वभावगत विलक्षणतायें विकसित हो जाती हैं। लोकमत तथा समाज की परिवर्तनशील आवश्यकताओं से उनका सम्पर्क टूट जाता है। अतः मेरा विचार है कि संघ तथा राज्य आयोगों दोनों में सरकारी कर्मचारियों को स्थायी बहुमत प्रदान करना सुरक्षित तथा लोक हित में नहीं होगा। उम्मीदवारों के चयन में गैर-सरकारी सदस्यों के ताजे दृष्टिकोण का भी काफी मात्रा में लाभ अवश्य उठाया जाना चाहिये।

मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर यहां नहीं हैं।

***एक माननीय सदस्यः** वह यहां हैं।

***श्री जसपतराय कपूरः** यदि वह यहां पर हैं तो उन्हें उनके द्वारा प्रस्तुत किये गये अनुच्छेदों के बारे में कुछ सुनने की परवाह नहीं है, क्योंकि यह अपने आपको इस बारे में सुरक्षित समझते हैं कि उनके किसी भी प्रस्ताव के विरुद्ध इस सभा का बहुमत प्राप्त करना संभव नहीं है। तथापि मैं आशा करता हूं कि यह सभा इस अवसर पर इस बात पर गंभीरता से विचार करेगी और वह डॉ. अम्बेडकर को मेरे कुछ संशोधनों को स्वीकार करने पर बाध्य करेगी जिन्हें मैं प्रस्तुत करूंगा। मैं एक संशोधन पहले ही प्रस्तुत कर चुका हूं और अन्य मैं इसके पश्चात् प्रस्तुत करूंगा। ऐसा प्रतीत होता है कि डॉ. अम्बेडकर में सरकारी कर्मचारियों के प्रति काफी सम्मान तथा स्नेह विकसित हो गया है। शायद इसका कारण यह है कि वह इतनी देर तक सरकार तथा मंत्रिमंडल से संबद्ध रहे हैं। सरकारी कर्मचारियों ने डॉ. अम्बेडकर से जो सम्मान अर्जित किया है मुझे उससे ईर्ष्या नहीं है। परंतु मैं यह अवश्य ही सोचता हूं कि जहां तक इस अनुच्छेद का संबंध है, डॉ. अम्बेडकर ने निश्चय ही स्वयं को सरकारी कर्मचारियों से अनुचित रूप में प्रभावित होने दिया है, क्यों हम देखते हैं कि उन्होंने वर्तमान संघ (फेडरल) लोक सेवा आयोग के सभापति के विचारों तथा राय की संघ लोक सेवा आयोग के सदस्यों के सर्वसम्मत विचारों की तथा विभिन्न प्रांतीय लोक सेवा आयोग के सभापतियों के विचारों की उपेक्षा की है।

आयें हम यह देखें कि इस विषय पर उनके विचार क्या हैं। गत वर्ष नयी दिल्ली में एक सम्मेलन हुआ, अर्थात् संघ (फेडरल) लोक सेवा आयोग के सभापति तथा सदस्यों एवं विभिन्न प्रांतीय लोक सेवा आयोग के सभापतियों का सम्मेलन। उन्होंने इस विषय पर अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये। मैं उस पुस्तिका से पढ़ रहा हूं जोकि संविधान सभा के कार्यालय द्वारा हमें भेजी गयी है और जिसमें कि इन प्रारूप प्रावधानों पर विभिन्न निकायों की टिप्पणियां समाविष्ट हैं।

> "संविधान के प्रारूप के अनुच्छेद 285(1) के परंतुक में उपलब्ध है कि प्रत्येक लोक सेवा आयोग के सदस्यों में से आधे ऐसे व्यक्ति होंगे जो अपनी-अपनी नियुक्ति की तारीख पर भारत सरकार या किसी राज्य सरकार के अधीन कम से कम दस वर्ष तक पद धारण कर चुके हैं। सम्मेलन की यह राय है कि सभी समाविष्ट हितों को प्रतिनिधित्व उपलब्ध कराने हेतु यह परंतुक अब संशोधित

किया जाना चाहिये और परंतुक की प्रथम पंक्ति में आये शब्द "आधे" के स्थान पर "एक तिहाई" शब्द रखा जाना चाहिये।"

संघ लोक सेवा आयोग के सभापति जैसे जिम्मेदार व्यक्ति की लंबे अनुभव पर आधारित सलाह की, जिसका कि सम्मेलन के अन्य सदस्यों ने सर्वसम्मति से समर्थन किया है, पूर्णत: उपेक्षा कर दी गई है, तथा गृह मंत्रालय के स्थायी कर्मचारियों के विचारों को अभिभावी होने दिया गया है। यदि हम गृह मंत्रालय के कर्मचारियों द्वारा प्रस्तुत किए गए ज्ञापन पत्र में दिए गए सुझाव को देखें, तो पता चलेगा कि उनके विचार कितने रूढ़िवादी हैं:

"हम आगे जो केवल मात्र टिप्पणियां करना चाहेंगे, वे लोक सेवा आयोगों के सभापतियों के सम्मेलन द्वारा की गई सिफारिशों से संबंधित हैं, जिन्हें कि संघ लोक सेवा आयोग ने अपने पत्र संख्या..... दिनांक..... के साथ संलग्न करके संविधान सभा को भेजा है।

उस पत्र के पैराग्राफ चार में यह सुझाव दिया गया है कि अनुच्छेद 285(1) में सेवा कर्मचारियों की संख्या "आधे" से बदलकर 'एक-तिहाई' कर दी जाए। इस मंत्रालय का दृष्टिकोण यह है कि लोक सेवा की दृष्टि से (कुल मिलाकर देश की दृष्टि से नहीं परंतु, निस्संदेह, वर्तमान सरकारी सेवकों की दृष्टि से) सेवाओं का प्रतिनिधित्व आयोग में और भी अधिक होना चाहिए।"

इसलिए, यदि उन्हें उनकी ही इच्छा के अनुसार काम करने दिया जाए तो वे लोक सेवा आयोग को शायद सरकारी सेवकों का नितांत एकाधिकार तथा अपने लिए एक सुरक्षित स्थान बना डालेंगे। अब तो हम देखते हैं, वह यह है कि डॉ. अम्बेडकर के सभापतित्व में प्रारूप समिति ने गृह मंत्रालय में सरकारी सदस्यों की सिफारिशें सहज ही स्वीकार कर ली हैं और संघ लोक सेवा आयोग तथा अन्य प्रांतीय लोक सेवा आयोगों के सभापतियों की संतुलित सिफारिशों की नितांत उपेक्षा की है। मेरे विचार में यह अत्यंत असंतोषप्रद बात है।

केवल इतनी ही बात नहीं है। मैं इस अनुच्छेद के बारे में एक और बात की ओर भी आपका ध्यान आकर्षित करूंगा। इस परंतुक में जिस बात की अपेक्षा है वह केवल यही नहीं है कि ऐसे आयोगों के आधे सदस्यों को सरकारी सेवा का दस वर्ष का अनुभव प्राप्त हो, परंतु उनके मामले में यह भी आवश्यक है कि उनकी नियुक्ति के समय वे सरकारी सेवक अवश्य ही होने चाहिए, जिसका अर्थ यह हुआ कि यदि कोई व्यक्ति सरकारी सेवा से किसी विशेष तारीख से केवल कुछ महीने पूर्व ही सेवानिवृत्त हुआ हो तो वह लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र नहीं है, अर्थात् उसे सरकारी सेवा से सेवानिवृत्त होने के पश्चात् एक महीने के लिए भी स्वयं को स्वतंत्र रूप से रहने का अवसर नहीं मिलना चाहिए। हम उच्च न्यायालय के एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश का उदाहरण लें जो साठ वर्ष की आयु प्राप्त हो जाने पर सेवानिवृत्त होता है। उस सेवानिवृत्ति के पश्चात् उसकी सेवानिवृत्ति के साथ ही उसे संघ लोक सेवा आयोग में नियुक्त किया जा सकता है, परंतु दुर्भाग्य से यदि वह एक या दो महीनों तक के लिए भी पद पर न रहा हो तो वह ऐसी नियुक्ति का पात्र नहीं होगा। मेरा निवेदन

[श्री जसपतराय कपूर]

है कि इसमें कोई समझदारी की बात नहीं है, इसके पीछे कोई तर्क नहीं है। अत: मैं निवेदन करूंगा कि लोक सेवा आयोग में सरकारी कर्मचारियों से भिन्न हितों के उचित प्रतिनिधित्व के लिए परंतुक में "आधे" के स्थान पर "एक-तिहाई" शब्द रखा जाना चाहिए।

इससे पहले वाले अनुच्छेद पर चर्चा करते हुए मेरे माननीय मित्र चौधरी रणबीर सिंह लोक सेवा आयोग में ग्रामीण विचारों वाले व्यक्तियों की नियुक्ति के लिए पुरजोर वकालत कर रहे थे। यदि हम "आधे" शब्द को कायम रखते हैं तो न तो ग्रामीण विचारों वाले सदस्य अथवा न ही नगरीय विचारों वाले सदस्य को नियुक्ति के लिए उचित अवसर उपलब्ध होगा। मैं समझता हूं कि माननीय सदस्य इस बात से सहमत होंगे कि लोक सेवा आयोग में यदि संभव हो तो, हमें सदैव ही अच्छा शिक्षाविद्, अच्छा लोक सेवक, आदि रखना चाहिये। परंतु यदि हम "आधे" शब्द को यहां बनाये रखते हैं तो हमारे किये न ही केंद्र में अथवा न ही प्रांतों में उचित रूप से गठित लोक सेवा आयोग रखना संभव होगा।

मेरे नाम में जो अगला संशोधन है वह इस प्रकार है जो कि मैं प्रस्तुत कर रहा हूं:

"That in clause (2) of the proposed article 285, the words 'in the case of the Union Commission the age of sixty-five years and in the case of a State Commission or a Joint Commission' be deleted."

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 285 के खंड (2) में 'यदि वह संघ आयोग है तो पैंसठ वर्ष की आयु को प्राप्त होने तक तथा यदि यह राज्य आयोग या संयुक्त आयोग है तो', शब्दों का लोप किया जाये।"

इस प्रकार, इन शब्दों का लोप किये जाने के पश्चात् इस खंड का पाठ यह होगा:

"लोक सेवा आयोग का सदस्य, अपने पद ग्रहण की तारीख से छ: वर्ष की अवधि तक अथवा साठ वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने तक इसमें से जो भी पहिले हो, अपना पद धारण करेगा।"

इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि सेवानिवृत्ति की आयु संघ लोक सेवा आयोग तथा राज्य लोक सेवा आयोगों दोनों के मामले में एक समान हो। मुझे इसका कोई कारण नजर नहीं आता कि इन दोनों मामलों में सेवानिवृत्ति की आयु भिन्न-भिन्न क्यों हो। यदि कोई व्यक्ति राज्य लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में साठ वर्ष की आयु प्राप्त होने पर काम करते रहने के अयोग्य हो जाता है, तो निश्चय ही वह संघ लोक सेवा आयोग के सदस्य के अधिक दूभर तथा अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण कर्तव्यों का निर्वहन करने के लिये कैसे अधिक योग्य हो सकता है। यदि वह एक स्थान पर साठ वर्ष की आयु प्राप्त होने पर काम करने के लिये अयोग्य है तो निश्चय ही वह एक अपेक्षाकृत उच्च निकाय में काम करने के लिये भी अयोग्य है। अत: मेरा विचार है कि यदि किसी अन्य कारण से

नहीं तो कम से कम एक समानता के लिए तो वह आवश्यक है कि दोनों मामलों में सेवानिवृति की आयु साठ वर्ष होनी चाहिए।

मेरा तीसरा संशोधन है:

"That Clause (3) of the proposed article 285 be deleted."

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 285 का खंड (3) निकाल दिया जाये।"

खंड (3) का पाठ इस प्रकार है:

"कोई व्यक्ति जो लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में पद धारण करता है, अपनी पदावधि की समाप्ति पर इस पद पर पुनर्नियुक्ति के लिये अपात्र होगा।"

मैं इसका निकाला जाना इसलिये नहीं चाहता कि मैं खंड की विषय-वस्तु के विरुद्ध हूं, परंतु इसलिये चाहता हूं कि वह अनुच्छेद 285-ग, जिसे कि डॉ. अम्बेडकर ने प्रस्तुत किया है और जो कि अनुच्छेद 285 का भाग है, की दृष्टि से बिल्कुल फालतू तथा अनावश्यक है। अनुच्छेद 285-ग के अंतर्गत यह विशिष्टता उपबंधित है कि किसी लोक सेवा आयोग के सेवानिवृत्त होने वाले सदस्य कौन-कौन सी नौकरी ग्रहण कर सकते हैं। इसके विभिन्न खडों के अंतर्गत-जिन्हें मुझे यहां पढ़ने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि ये अत्यंत स्पष्ट हैं–लोक सेवा आयोग के सेवानिवृत्त होने वाले सदस्य के लिए उसी पद पर पुनर्नियुक्ति संभव नहीं है। निसंदेह, वह भिन्न-भिन्न लोक सेवा आयोगों के अन्य पदों पर नियुक्त हो सकता है, परंतु वह उसी पद पर पुनर्नियुक्त नहीं हो सकता है जोकि उसने रिक्त किया है। अत: इस अनुच्छेद का खंड (3) बिल्कुल अनावश्यक है तथा इस अनावश्यक खंड को बनाये रखकर संविधान पर बोझ नहीं डालना चाहिये।

मेरे नाम में अगला संशोधन है, संशोधन संख्या 10 (सूची 1, पंचम सप्ताह)।

***अध्यक्ष:** संशोधन 8 के बारे में क्या है?

***श्री जसपतराय कपूर:** मैं संशोधन संख्या 8 प्रस्तुत नहीं कर रहा हूं क्योंकि इसका संबंध मूल अनुच्छेद से है जैसा कि वह प्रस्तुत किया गया है, परंतु अब उसे त्याग दिया गया है और इसलिए अब इस संशोधन का कोई स्थान नहीं रह गया है।

मैं अब संशोधन संख्या 10 प्रस्तुत करता हूं और वह इस प्रकार है:

"That in clause (b) of the proposed new article 285-B, the following words be inserted at the beginning:—

'in consultation with the Chairman of the Public Service Commission concerned.' "

[श्री जसपतराय कपूर]

"कि प्रस्तावित नए अनुच्छेद 285-ख क उप-खंड (ख) में आरंभ में निम्नलिखित शब्द रखे जायें:

'सम्बन्धित लोक सेवा आयोग के सभापति के परामर्श से'।"

इस प्रकार अनुच्छेद 285-ख के खंड (ख) का पाठ यह होगा:

"संघ-आयोग या संयुक्त आयोग के बारे में राष्ट्रपति तथा राज्य आयोग के बारे में उस राज्य का राज्यपाल अथवा राजप्रमुख विनियमों द्वारा—

(ख) सम्बन्धित लोक सेवा आयोग के सभापति के परामर्श से आयोग के कर्मचारिवृन्द के सदस्यों की संख्या से तथा उनकी सेवा की शर्तों के संबंध में उपबंध कर सकेगा।"

मेरे विचार में मेरा यह संशोधन आसानी से स्वीकार कर लिया जाना चाहिये क्योंकि इसके द्वारा केवल यह उपबंध करने का प्रयास किया गया है कि आयोग के कर्मचारिवृन्द की नियुक्ति करते समय तथा उनके वेतन तथा सेवा की शर्तों आदि निर्धारित करते समय, यदि किसी अन्य कारण से नहीं तो शिष्टाचार के नाते, यथास्थिति, राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल अथवा शासक द्वारा सम्बन्धित लोक सेवा आयोग के सभापति से परामर्श किया जाना चाहिये। यह केवल शिष्टाचार के नाते ही नहीं किया जाना चाहिये, बल्कि मेरे विचार में इससे अत्यन्त लाभदायक प्रयोजन सिद्ध होगा। इन आयोगों के सभापति ही वे सर्वोत्तम व्यक्ति हैं जो यह जानते हैं कि आयोगों की आवश्यकता क्या है और वे अपने कर्मचारिवृन्द में किए प्रकार के व्यक्ति चाहते हैं तथा कर्मचारियों की संख्या, वेतन और सेवा की शर्तें क्या होनी चाहिए। उच्च न्यायालय के कर्मचारिवृन्द, नियंत्रक महालेखापरीक्षक के कर्मचारिवृन्द तथा अन्य मामलों में यह प्रावधान किया गया है कि जबकि नियुक्ति तो राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल द्वारा की जानी है परंतु कार्यालय के प्रमुख से परामर्श किया जाना चाहिये। यह एक आवश्यक तथा लाभप्रद प्रावधान है और मेरे विचार में हमें यह प्रावधान यहां अनुच्छेद 285-ख में भी अवश्य रखना चाहिए।

महोदय, मेरा अगला संशोधन है, संशोधन संख्या 11 और इसका पाठ इस प्रकार है:

"That in the proposed new article 285-C.

(i) for the word employment wherever it occurs the words 'office of profit' be substituted; and

(ii) in clause (d) after the words 'State Public Service Commission' where they occur for the second time, the words or as a member of any other State 'Public Service Commission' be inserted."

(i) ["कि प्रस्तावित नए अनुच्छेद 285-ग (i)—में नौकरी शब्द जहां-जहां भी आया है, के स्थान पर 'लाभ का पद' शब्द रखे जाएं; और

(ii) खंड (घ) में 'अथवा उसी या किसी अन्य राज्य लोक सेवा के सभापति के रूप में' शब्दों के पश्चात् 'अथवा किसी अन्य राज्य लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में' शब्द अंत:स्थापित किए जाएं।"]

मैं इन दोनों संशोधनों को एक-एक करके लूंगा। अनुच्छेद 285 में हमने सभी स्थानों पर "नौकरी" शब्द रखा है। इसका आशय यह है कि सेवानिवृत्त होने के पश्चात् आयोग का कोई सदस्य केंद्रीय अथवा प्रांतीय आयोगों द्वारा उस हैसियत के सिवाय जोकि स्वयं इस अनुच्छेद में उल्लिखित है, किसी भी प्रकार की अन्य हैसियत में नौकरी पर नहीं रखा जायेगा। यह एक अन्यन्त स्वस्थ प्रावधान है और मैं इसका पूरा समर्थन करता हूं। मैं चाहता हूं कि इसके क्षेत्र को उस सीमा तक बढ़ा दिया जाये जिसका उल्लेख मैं बाद में उस समय करूंगा जबकि मैं एक और संशोधन प्रस्तुत करूंगा। परंतु मैं यह नहीं समझ पा रहा हूं कि केन्द्रीय अथवा प्रांतीय सरकारों को यह छूट क्यों न रहे कि वे लोक सेवा आयोगों के सेवानिवृत्त होने वाले सदस्यों की सेवाओं का उपयोग अवैतनिक हैसियत में कर सकें। मैं यह मानकर चलता हूं कि "नौकरी" शब्द में सभी नौकरियां आ जाती हैं, चाहे वे वैतनिक हों अथवा अवैतनिक। यदि सामान्यतया भी नौकरी शब्द से यह समझा जाता है कि इसके लिये कुछ वेतन रखा गया है तो भी मेरा विचार है कि स्थिति को स्पष्ट करने के लिए यह ठीक रहेगा कि इसके स्थान पर "लाभ का पद" शब्द रखे जायें। इस विषय में मेरी दृढ़ राय है कि ऐसे लोगों से, जो कि लंबी अवधि तक काफी ऊंचे वेतनों पर सरकारी सेवा में रहे हों और अब अच्छी-खासी पेंशन पाते हों, यह आशा भी की जानी चाहिये कि वे राज्य तथा समाज को अपनी अवैतनिक सेवा भी प्रदान करें। अत:, मेरा विचार है कि मेरे इस संशोधन को स्वीकार करना आवश्यक है।

मैंने जो अगला संशोधन प्रस्तुत किया है वह यह है:

"कि खंड (घ) में 'अथवा इसी या किसी अन्य राज्य लोक सेवा आयोग के सभापति के रूप में' शब्दों के पश्चात् 'अथवा किसी अन्य राज्य लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में' शब्द अन्त:स्थापित किये जायें।"

तत्पश्चात् इस खंड का पाठ इस प्रकार होगा: "किसी राज्य लोक सेवा आयोग के सभापति के अतिरिक्त अन्य कोई सदस्य संघ लोक सेवा आयोग के सभापति या किसी अन्य सदस्य के रूप में अथवा उसी या किसी अन्य राज्य लोक सेवा आयोग के सभापति के रूप में अथवा किसी अन्य राज्य लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में.....।" इस संशोधन का आशय यह है कि किसी राज्य लोक सेवा आयोग का कोई सदस्य उस आयोग के सदस्य के रूप में अपने पद से हटने के पश्चात् किसी अन्य राज्य लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में नियुक्ति के लिये पात्र हो सके। खंड (घ) में हम देखते हैं कि किसी राज्य लोक सेवा आयोग का सभापति किसी अन्य राज्य लोक सेवा आयोग के सभापति के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र होगा। इसका अर्थ यह हुआ कि वह एक समानान्तर

[श्री जसपतराय कपूर]

पद पर नियुक्ति के लिए पात्र होगा। इसी के सादृश्य के आधार पर मेरे विचार से किसी राज्य लोक सेवा आयोग से सेवानिवृत्त होने वाला कोई सदस्य किसी अन्य राज्य लोक सेवा आयोग में किसी अन्य समानांतर पद पर नियुक्ति के लिये पात्र होना चाहिए। आयोग में किसी अन्य समानांतर पद पर नियुक्ति के लिये पात्र होना चाहिए। किसी राज्य लोक सेवा आयोग के सभापति तथा उसके किसी सदस्य के बीच भेदभाव करने का मुझे कोई कारण नज़र नहीं आता।

अध्यक्ष महोदय, अब मेरा अंतिम संशोधन इस प्रकार है। माननीय सदस्यों के पास इसकी प्रतियां नहीं होंगी क्योंकि यह संशोधन मैंने आज प्रातः सत्र आरंभ होने से पूर्व दिया था। संशोधन का पाठ इस प्रकार है:

'कि प्रस्तावित नये अनुच्छेद 285-ग के अंत में यह परंतुक जोड़ा जाये:—

'Provided that a member's total period of employment in the different Public Service Commissions shall not exceed twelve years.' "

["परंतु यह कि भिन्न-भिन्न लोक सेवा आयोगों में किसी सदस्य की नौकरी की कुल अवधि 12 वर्ष से अधिक नहीं होगी।"]

यह संशोधन मेरे अन्य संशोधनों से अधिक महत्वपूर्ण है। मेरे इस दृष्टिकोण की पुष्टि उस समय हुई जब मैंने डॉ. अम्बेडकर को आज प्रातः सुना, जब वह अपना संशोधन प्रस्तुत कर रहे थे। अनुच्छेद 285 के बारे में स्पष्टीकरण देते हुए उन्होंने कहा कि कोई सदस्य किसी लोक सेवा आयोग के सदस्य का पद छः वर्ष से अधिक धारण नहीं करेगा। निसंदेह इसका प्रावधान अनुच्छेद 285 के खंड (3) में अंशतः किया गया है। परंतु उस खंड में केवल उसी पद के लिए पुनर्नियुक्ति का उल्लेख है। जहां तक अन्य पदों का संबंध है वह खंड लागू नहीं होता। अतः अनुच्छेद 285-ग के अनुसार लोक सेवा आयोग का कोई सदस्य किसी एक या दूसरे लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में कितने ही वर्षों तक रह सकता है। मैं 'कितने ही वर्षों तक' इसलिए कह रहा हूं क्योंकि कोई व्यक्ति छः वर्षों तक राज्य लोक सेवा आयोग का सदस्य हो सकता है। इसके पश्चात् वह अन्य छः वर्षों तक किसी राज्य लोक सेवा आयोग का सभापति बन सकता है कुल मिलाकर बारह वर्ष हो जाते हैं। इसके पश्चात् वह फिर छः वर्षों की तीसरी पदावधि के लिए किसी अन्य लोक सेवा आयोग का सभापति बन सकता है और इस प्रकार उसका सेवाकाल कुल मिलाकर उठारह वर्ष हो सकता है। इसके पश्चात् वह छः वर्षों तक संघ लोक सेवा आयोग का सदस्य बन सकता है और उसकी कुल सेवा 24 वर्षों की हो जाती है। फिर यदि भाग्य ने उसका साथ दिया तो वह अगले छः वर्षों के लिए संघ लोक सेवा आयोग का सभापति बन सकता है। इस प्रकार वह तीस वर्षों तक अथवा 65 वर्ष की आयु पूरी होने तक सेवा में बना रह सकता है। मेरा निवेदन है कि यह कोई संतोषप्रद स्थिति नहीं है। मैं आशा करता हूं कि प्रारूप समिति का भी यह आशय नहीं है, तथा डॉ. अम्बेडकर का तो तनिक भी नहीं कि सरकार के लिए यह छूट रहे कि वह लोक सेवा आयोग के किसी सदस्य को, जोकि सरकार की इच्छाओं तथा अभिरूचियों के अनुसार काम करता रहे, अनुग्रहीत करती रहें।

निसंदेह यह अनुच्छेद लोक सेवा आयोग के सेवानिवृत्त होने वाले सदस्यों की नौकरी पर रोक लगाने का दिखावा करता है। परंतु जब हम सावधानीपूर्वक इसका विश्लेषण करते हैं, तो हमें पता चलता है कि जहां तक इसके सार का संबंध है, मात्र दिखा ही दिया गया है। हम देखते हैं कि सरकार किसी व्यक्ति को लोक सेवा आयोग में, निसंदेह, भिन्न-भिन्न लोक सेवा आयोगों में कितनी भी अवधि तक बनाए रख सकती है। मैं इस अनुच्छेद को जैसा कि इस समय इसका रूप है इससे भी अधिक घिनावना समझता हूं कि यदि ऐसा प्रवाधान होता कि लोक सेवा आयोग के सदस्य स्थायी सरकारी कर्मचारी होंगे जब तक कि वह पैंसठ वर्ष की आयु को प्राप्त नहीं हो जाते।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** जब तक कि उनका देहावसान नहीं हो जाता।

***श्री जसपतराय कपूर:** यदि वे स्थायी होंगे, तो वे अपनी भावी नौकरी के लिए राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल की ओर नहीं ताकेंगे और जहां तक राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल का संबंध है, वे केवल अपने मंत्रिमंडलों के परामर्श पर कार्य करेंगे। यदि लोक सेवा आयोग के सदस्य स्थायी होंगे, तो उन्हें अपने भविष्य के लिए सरकार की कृपा की आशा नहीं करनी होगी और वे बिल्कुल स्वाधीन रहकर कार्य करेंगे। वे न तो सरकार की मुस्कराहटों के पीछे भागेंगे और न ही सरकार की अप्रसन्नता से भयभीत होंगे। परंतु जैसी कि व्यवस्था इस समय है, जब छः वर्षों की अवधि समाप्त होने को होगी, तो वे तत्कालीन सरकार की ओर देखेंगे कि उन्हें किसी अन्य लोक सेवा आयोग में पुनर्नियुक्त किया जाए और इसलिए उनसे यह आशा नहीं की जा सकती है कि वे पूर्णतः स्वाधीन तथा निष्पक्ष रूप में कार्य करेंगे, जिस रूप में कि मैं आशा करता हूं, निश्चय ही डॉ. अम्बेडकर उनके द्वारा काम लिया जाना पसंद करेंगे। अतः यह आवश्यक है कि लोक सेवा आयोग के सदस्यों के समक्ष प्रत्येक छः वर्षों की अवधि के पश्चात् पुनर्नियुक्ति का यह प्रलोभन न रखा जाए। यदि डॉ. अम्बेडकर का वास्तव में यह आशय है कि सेवा की अवधि छः वर्षों से अधिक न हो तो मैं बिल्कुल यही चाहूंगा कि मैं अपने संशोधन में "बारह वर्ष" के स्थान पर "छः वर्ष" रखूं, परंतु यदि आशा यह नहीं है तो मेरे विचार में यह आवश्यक है कि मैंने जो संशोधन प्रस्तुत किया है, जिसके अनुसार कि उनकी सेवा को बारह वर्षों तक तथा इससे अधिक नहीं, सीमित रखा है, उसे स्वीकार किया जाए।

महोदय, ये विभिन्न संशोधन हैं जो मैंने प्रस्तुत किए हैं और मुझे आशा है कि डॉ. अम्बेडकर उन पर गंभीरतापूर्वक विचार करेंगे तथा उन्हें स्वीकार करेंगे, यदि सभी को नहीं तो कम से कम ऐसे संशोधनों को जोकि इनमें अधिक महत्वपूर्ण हैं।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रांतः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 3 में प्रस्तावित नए अनुच्छेद 285-ख के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाये:

285.-B. (1) In the case of the Union Commission or a Joint Commission, the President and, in the case of a State Commission, the Governor or Ruler of the State may, by

Conditions of Service of members and staff of the Commission.

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

regulations, determine the number of members of the Commission and their conditions of service and the number of members of the staff of the Commission:

Provided that conditions of service of a member of a Public Service Commission shall not be altered to his disadvantage after his appointment.

(2) Appointments of the members of the staff of a Public Service Commission shall be made, and the Conditions of service of those members shall be such as may be prescribed, by the Chairman of the Commission of such other member of the Commission as the Chairmn may direct:

Provided that the conditions of service prescribed under this clause shall, so far as they related to salaries, allowances, leave or pensions, require the approval, in the case of the Union Commission or a Joint Commission of the President and in the case of a State Commission, of the Governor or Ruler of the State."

['285.ख आयोग के सदस्यों और कर्मचारिवृन्द की सेवा की शर्तें

(1) संघ आयोग या संयुक्त आयोग के बारे में राष्ट्रपति तथा राज्य आयोग के बारे में उस राज्य का राज्यपाल या शासक विनियमों द्वारा आयोग के सदस्यों की संख्या तथा उनकी सेवा की शर्तों का और आयोग के कर्मचारिवृन्द के सदस्यों की संख्या का निर्धारण कर सकेगा:

परन्तु लोक सेवा आयोग के सदस्य की शर्तों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसको अलाभकारी परिवर्तन न किया जायेगा।

(2) लोक सेवा आयोग के कर्मचारिवृन्द के सदस्यों को नियुक्ति आयोग के सभापति अथवा आयोग के किसी ऐसे सदस्य द्वारा, जिसे कि सभापति निदेश दे, की जायेगी तथा ऐसे सदस्यों को सेवा की शर्तें इनके द्वारा विहित की जायेंगी:

परन्तु इस खण्ड के अन्तर्गत विहित सेवा की शर्तों के लिए, जहां तक कि उनका सम्बन्ध वेतनों, भत्तों, अवकाश अथवा पेंशनों से है, संघ आयोग अथवा संयुक्त आयोग के बारे में राष्ट्रपति का तथा राज्य आयोग के बारे में राज्यपाल या शासक का अनुमोदन अपेक्षित होगा।"]

महोदय, मेरे संशोधन का प्रयोजन बिल्कुल साधारण है। डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत अनुच्छेद 285-ग में यह नहीं कहा गया है कि लोक सेवा आयोग के कर्मचारिवृन्द के सदस्यों की नियुक्ति किस प्रकार है। मेरा संशोधन उस कमी को दूर करता है। इसमें निर्धारित किया गया है कि लोक सेवा आयोग के कर्मचारिवृन्द के सदस्यों की नियुक्ति या तो आयोग के सभापति द्वारा अथवा आयोग के किसी ऐसे अन्य सदस्य द्वारा की जायेगी जिसे कि वह इसके लिए प्राधिकृत करे। सदन को याद होगा कि उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों को अपने कर्मचारिवृन्द के सदस्यों की नियुक्ति का अधिकार दिया गया है। उच्चतम न्यायालय के मामले में उनकी

नियुक्ति या तो मुख्य न्यायाधीश द्वारा की जायेगी अथवा किसी ऐसे अन्य न्यायाधीश द्वारा की जायेगी जिसे कि वह इस सम्बन्ध में प्राधिकृत करे। ऐसा ही उपबन्ध उच्च न्यायालयों के कर्मचारिवृन्द के सदस्यों के नियुक्ति के सम्बन्ध में किया गया है। लोक सेवा आयोग चूंकि बहुत महत्वपूर्ण निकाय होंगे अत: यह वांछनीय है कि अपने कर्मचारियों की नियुक्ति के सम्बन्ध में उन्हें वैसी ही स्वतन्त्रता प्रदान की जाये जैसी कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों को अपने कर्मचारियों की नियुक्ति के सम्बन्ध में प्राप्त होगी।

लोक सेवा आयोगों की महत्ता स्पष्ट है। वे राज्य के अधीन पदों के लिये भर्ती विषयक कार्य करेंगे। परिणामत: राज्य के प्रशासन की कुशलता इस बात पर निर्भर करेगी कि उसकी सेवाओं के लिये भर्ती किस रीति से की जाती है। अत: यह बात अन्यन्त महत्वपूर्ण है कि भर्ती करने वाले निकाय को, कतिपय सीमाओं में रहते हुये, यथासम्भव अधिक से अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त हो। अत: मैं प्रस्ताव करता हूं कि किसी लोक सेवा आयोग के कर्मचारीवृन्द की नियुक्ति उस आयोग के सभापति द्वारा की जाये अथवा नियुक्तियां करने के लिये उसके द्वारा प्राधिकृत किसी अन्य अन्य सदस्य द्वारा की जाये।

दूसरी बात जिस पर मेरे संशोधन और डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत अनुच्छेद 285-ख में अन्तर है वह लोक सेवा आयोग के कर्मचारीवृन्द की सेवा की शर्तों के निर्धारण की है। डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत अनुच्छेद में इस सम्बन्ध में सब शक्तियां संघ और संयुक्त आयोगों के मामले में राष्ट्रपति को प्रदान की गयी हैं और राज्य लोक सेवा आयोग के मामले में राज्यों के राज्यपालों और शासकों को प्रदान की गयी है। उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों को सेवा की शर्तों का निर्धारण क्रमश: राष्ट्रपति के और सम्बन्धित राज्य के राज्यपाल के अनुमोदन से करने की शक्ति प्रदान की गयी है। ऐसी ही प्रक्रिया का यहां भी पालन नहीं किये जाने का कोई कारण नहीं है। यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल, जो भी इस विषय के सम्बन्ध में कार्य करेगा, यदि वह न्यायप्रिय है और चाहता है कि लोक सेवा आयोग के कर्मचारी कार्यक्षम एवं संतुष्ट हों तो वह सम्बन्धित लोक सेवा आयोग से परामर्श करेगा। यही तर्क उच्चतम न्यायालय अथवा उच्च न्यायालयों के सम्बंध में भी दिया जा सकता था, परन्तु इन निकायों को राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल अथवा शासक, जैसी भी स्थिति हो, के अनुमोदन से अपने कर्मचारियों की सेवा की शर्तें निर्धारित करने की शक्ति प्रदान की गयी है। लोक सेवा आयोग और इन निकायों के बीच इस संबंध में भेद करने का कोई कारण नहीं है। अत: मेरा प्रस्ताव है कि लोक सेवा आयोग को अपने कर्मचारियों की सेवा की शर्तें निर्धारित करने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिए परन्तु जहां तक उनकी सेवा की शर्तों का सम्बन्ध उनके वेतन, भत्तों, अवकाश अथवा पेंशन से हो उस बारे में उसे राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल अथवा शासक का अनुमोदन प्राप्त करना चाहिए मेरे माननीय मित्र श्री जसपत राय कपूर ने भी इस विषय पर एक संशोधन पेश किया है। उनके संशोधन का उद्देश्य यह है कि राष्ट्रपति तथा राज्यों के राज्यपाल तथा शासक इन मामलों में निर्णय लेने से पूर्व अपने-अपने लोक सेवा आयोगों से परामर्श करें। मैं एक कदम और आगे बढ़कर कहता हूं कि प्रारम्भ में ही शक्ति सेवा आयोगों को प्राप्त होनी चाहिये, परन्तु उनके लिये यह अपेक्षित होना चाहिये कि वे वेतन, भत्ते और अवकाश एवं पेंशन का निर्धारण राष्ट्रपति, राज्यपाल या शासक, जैसी भी स्थिति हो, के अनुमोदन से करें। मैं समझता हूं कि किसी अन्य कारण से नहीं, तो कम से कम समरूपता लाने के लिये और

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

यह दर्शाने के लिये कि संविधान सभा यह नहीं चाहती कि लोक सेवा आयोग और उच्च न्यायालय के दर्जे में कोई अन्तर हो, मेरा संशोधन स्वीकार करना वांछनीय है जो श्री जसपत राय कपूर के संशोधन से बेहतर है। अतः मैं आशा करता हूं कि सदन मेरा संशोधन स्वीकार करेगा।

महोदय अब मैं उन दो उपबन्धों के विषय में कुछ शब्द कहना चाहूंगा जो डॉ. अम्बेडकर ने सदन में पेश किये हैं। उनके द्वारा प्रस्तावित अनुच्छेद के अनुसार यह अपेक्षित है कि किसी लोक सेवा आयोग का कोई सदस्य रहने के पश्चात उस आयोग में पद धारण नहीं करेगा। उन्होंने प्रस्ताव किया है कि लोक सेवा आयोग का कोई सदस्य अपनी पदावधि पूरी कर लेने पर उस पद पर अग्रेतर नियोजन के लिये अपात्र होगा। इस उपबन्ध की आलोचना की गयी है। तथापि, मैं पूर्णतया इसके पक्ष में हूं। लोक सेवा आयोग स्वतन्त्र निकाय होना चाहिये। इसके सदस्य इस स्थिति में नहीं होने चाहिए कि कोई काम कराने के लिए कार्यपालिका की ओर देखें। यदि डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित उपबन्ध रखा जाता है तो ऐसी आशंका नहीं रहेगी कि लोक सेवा आयोग का कोई सदस्य कार्यपालिका की इच्छाओं पर निर्भर करे चूंकि वह अपनी पदावधि बढ़वा नहीं सकेगा अतः उससे यह आशा की जा सकती है कि वह अपने कर्तव्यों का निर्वहन स्वतन्त्रतापूर्वक एवं निर्भीक भाव से करेगा। परन्तु, यदि आयोग के सदस्यों की पदावधि बढ़ाये जाने का उपबन्ध किया जाता है अथवा यदि उसकी पुनर्नियुक्त के लिये उपबन्ध किया जाता है तो इस बात की पूरी आशंका रहेगी कि लोक सेवा आयोगों के सदस्य अपनी पुनर्नियुक्ति कराने के लिये कार्यपालिका की चापलूसी करने का प्रयास करेंगे। अतः मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित उपबन्धों में कोई परिवर्तन किये जाने के पक्ष में नहीं हूं।

इसके पश्चात् मैं लोक सेवा आयोगों के सभापति और सदस्यों की राज्य के अधीन पुनर्नियुक्ति के लिये पात्रता का उल्लेख करना चाहूंगा अनुच्छेद 285 (ग) के उपबन्धों की दो प्रकार से आलोचना की गयी है, अर्थात् यह कि वे अनावश्यक रूप से व्यापक हैं या कि कुछ मामलों में ये अनावश्यक रूप में संकीर्ण हैं। मेरे माननीय मित्र श्री जसपत राय कपूर ने सुझाव दिया है कि लोक सेवा आयोग के सदस्य या सभापति को अवैतनिक आधार पर राज्य की सेवा करने से वंचित नहीं रखा जाना चाहिए। मैं मानता हूं कि मैंने इस विषय पर पहले कभी विचार नहीं किया था, परन्तु जब उनके बोलते समय मैंने इस पर विचार किया तो मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि वह एक तर्कसंगत सुझाव दे रहे हैं। संयुक्त प्रान्त में एक अथवा दो मामलों में यह इच्छा व्यक्त की गयी कि लोक सेवा आयोग के सभापति को उसकी सेवानिवृति पर अवैतनिक आधार पर उपयोगी ढंग से पुनर्नियुक्त किया जा सकता है। वह व्यक्ति योग्य था और यह सोचा गया कि लोगों को उसकी सेवाओं से पूर्ण रूप से वंचित नहीं किया जाना चाहिये। अतः मैं इस विषय पर श्री कपूर द्वारा व्यक्त किये गये विचार से सहमत हूं।

तथापि, अनुच्छेद 285 (ग) में अन्य संशोधनों का जो सुझाव उन्होंने दिया है उससे मैं सहमत नहीं हूं। मैं समझता हूं कि प्रारूप संविधान में अन्तर्विष्ट तत्स्थानी अनुच्छेद से इस अनुच्छेद में सुधार हुआ है। इसमें एक आयोग के सदस्य को किसी अन्य आयोग के अध्यक्ष पद को स्वीकार करने की अनुमति दी गयी है चाहे वह किसी राज्य का आयोग हो अथवा संघ आयोग। यह आशंका व्यक्त की गयी थी कि यदि ऐसा अनुबन्ध किया गया तो लोक सेवा आयोगों के सदस्य

कार्यपालिका के चहेते बनकर एक के बाद दूसरे लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त होने का प्रयास करते रह सकते हैं। इस विषय में ध्यान देने वाली बात यह है कि लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष पद ऐसा पद है जिसके लिये बड़े अनुभव और योग्यता की आवश्यकता है यदि ऐसा समझा जाता है कि किसी व्यक्ति ने किसी आयोग के सदस्य के रूप में अथवा अध्यक्ष के रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वहन इतनी अच्छी तरह से किया है कि उसे किसी अन्य आयोग के अध्यक्ष पद पर नियुक्त करना न्यायोचित होगा तो मेरी समझ में नहीं आता है कि इस पर कोई आपत्ति क्यों होनी चाहिये। यह तो देश के लिये उपयोगी है कि आयोग के सदस्य की स्वतन्त्रता कम किए बिना उसकी सेवा में निपुण सिद्ध क्षमता का उपयोग किया जाये। यह उपबन्ध करने का प्रस्ताव कि किसी आयोग का सदस्य उसी आयोग का दो पदावधियों के लिए सदस्य रह सकता है, एक भिन्न प्रकार का प्रस्ताव है चूंकि इस उपबन्ध में सदस्य की स्वतंत्रता में अवश्य बाधा पड़ेगी। परन्तु यदि किसी राज्य के लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष को किसी अन्य राज्य के लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष नियुक्त किया जाता है तो ऐसी कोई आशंका नहीं हो सकती कि उसकी पुनर्नियुक्ति उसके राज्य के प्रीमियर अथवा राज्यपाल की सिफारिश से हुई है। अतः मैं नहीं समझता कि जिस उपबन्ध की आलोचना की गयी है उसमें कोई संशोधन करना आवश्यक है।

मैं समझता हूं कि सदन को वर्तमान अनुच्छेदों को इसी रूप में स्वीकृत करना चाहिये, सिवाय उस संशोधन के जिसका सुझाव श्री कपूर ने दिया है। मुझे आशा है कि डॉ. अम्बेडकर श्री कपूर द्वारा किये गये इस सुझाव को स्वीकार करने का उपाय ढूंढ निकालेंगे कि लोक सेवा आयोग के सेवानिवृत सदस्यों को अवैतनिक आधार पर देश की सेवा करने से वंचित नहीं किया जाना चाहिये।

***श्री जसपतराय कपूरः** क्या मैं जान सकता हूं कि नौकरी की अवधि बारह वर्षों तक सीमित करने विषयक मेरे सुझाव के बारे में माननीय सदस्य पंडित कुंजरू का क्या विचार है?

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** उस विषय में मैं अपने विचार व्यक्त कर चुका हूं कि किसी लोक सेवा आयोग के सदस्य को निरन्तर एक के बाद दूसरे आयोग का अध्यक्ष नियुक्त होने का सौभाग्य प्राप्त हो जाये तो वह 18 वर्षों तक नौकरी में रह सकता है। यदि आयोगों के सभापति पद पर नियुक्ति करना केन्द्रीय सरकार के अधिकार में होता तो तब मेरे माननीय मित्र, श्री कपूर की आपत्ति मान्य हो सकती थी। परन्तु राज्यों के आयोगों के सभापति पद के सम्बन्ध में नियुक्ति करने वाला प्राधिकारी एक ही नहीं होगा। प्रत्येक आयोग के लिये नियुक्ति करने वाला प्राधिकारी अलग-अलग होगा। परिणामतया यह आशंका नहीं होनी चाहिए कि किसी लोक सेवा आयोग के सभापति की पदावधि पूरी हो जाने के पश्चात् किसी अन्य आयोग के सभापति के रूप में नियुक्त होने के लिए उस पर कार्यपालिका कोई अनुचित प्रभाव डाल सकेगी अथवा वह पूरी स्वतन्त्रता से अपने कर्तव्यों का निर्वहन नहीं करेगा।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** अध्यक्ष महोदय, मेरे पास बहुत से ऐसे संशोधन हैं परन्तु मैं एक ही संशोधन पेश करना चाहता हूं। मेरी इच्छा है कि उसे अब पेश कर दूं और अन्त में सामान्य चर्चा में भाग लूं। इससे बड़ी सुविधा होगी। वास्तव में अनेक प्रकार की धारायें है और अनेक प्रकार के संशोधन हैं जिसमें से अधिकांश

संभवतया पेश भी न किये जायें। यदि आप मुझे इसकी अनुमति दें तो बड़ी सुविधा होगी।

***अध्यक्ष:** आप कौन सा संशोधन पेश करना चाहते हैं?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैं केवल संशोधन संख्या 69 पेश करूंगा। यह लगभग प्रारूपण सम्बन्धी संशोधन है। परन्तु मैं इसे महत्वपूर्ण समझता हूं। मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधनों में संशोधनों की सूची-1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 3 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 285-क के खंड 1 में 'shall only be removed from office by order of the President on the ground of misbehaviour' (केवल राष्ट्रपति द्वारा कदाचार के आधार दिये गये उस आदेश पर ही हटाया जायेगा)' शब्दों के स्थान पर 'may be removed from office by order of the President only on the ground of misbehaviour (राष्ट्रपति द्वारा केवल कदाचार के आधार पर दिये गये उस आदेश पर हटाया जा सकेगा)' शब्द रखे जायें।"

क्या आप मुझे अनुमति देंगे कि मैं सभी संशोधन पेश किये जाने के पश्चात् अपने संशोधन के विषय में कुछ कहूं?

***अध्यक्ष:** ठीक है।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, आज सदन हमारे संविधान के एक महत्वपूर्ण अध्याय पर विचार कर रहा है। जब से हम देश के दुर्भाग्यपूर्ण विभाजन के साथ दो वर्ष पूर्व स्वतन्त्र हुये हैं, हमने देखा है कि अधिकांश लोक सेवाओं में काफी ह्रास हुआ है और सेवाओं की स्वच्छता और उनकी प्रशासनिक कुशलता का प्रश्न पहली बार इतने विशिष्ट रूप से हमारे सामने आया है। अत: मैं समझता हूं कि इस अध्याय पर जितने ध्यान से हम विचार करेंगे उतना ही हमारे देश के भविष्य के लिये हितकर होगा।

मैंने चार संशोधनों की सूची दी है जो मैं अब आपकी अनुमति से, सदन में पेश करूंगा। मैं आपसे और सदन से क्षमा चाहूंगा कि मैंने आज प्रात: ही संशोधनों की सोचना दी है, जिस कारण मेरे साथियों को मेरे संशोधनों की प्रतियां उपलब्ध नहीं करायी जा सकीं। इसका सारा दोष मेरा ही है। मैं अपने माननीय मित्रों से अपील करूंगा कि जैसे-जैसे मैं अपने संशोधनों का पाठ सदन में पढ़ूं, वैसे-वैसे वे इन्हें समझें।

मेरा प्रथम संशोधन इस प्रकार है:

"कि सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 3 में प्रस्तावित अनुच्छेद 285-क के खण्ड 1 के, परन्तुक 'at least one half (कम से कम आधे)' शब्दों के स्थान पर 'not more than one half (आधे से अनधिक)' शब्द रखे जायें।"

मेरा दूसरा संशोधन इस प्रकार है:

"कि सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 3 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 285-क के खण्ड 1 में 'misbehaviour or of infirmity of mind or body'

(कदाचार के या मानसिक या शारीरिक दौर्बल्य के)' शब्दों के स्थान पर 'misdemeanour or incapacity (उपापराध या असमर्थता)' शब्द रखे जायें।"

मेरे तीसरे संशोधन के दो विकल्प हैं यदि सदन को स्वीकार्य न हो तो मैं आग्रह करूंगा कि दूसरे विकल्प को स्वीकार किया जाये। पहला इस प्रकार है:

"That in amendment No. 3 of List 1 (Fifth Week), sub-clause (b) of clause (3) of the proposed article 285-A be deleted."

["कि सूची 1, (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 3 में प्रस्तावित अनुच्छेद 285-क के खण्ड 3 के उपखण्ड (ख) को निकाल दिया जाये।"]

या यदि यह सदन को स्वीकार्य न हो तो इसका विकल्प यह है:—

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 285-क के उसी खण्ड 3 (ख) में 'engages during his term of office in any body's employment (अपनी पदावधि में..... किसी की नौकरी करता है)' शब्दों के स्थान पर 'takes up during his term of office any other employment (अपनी पदावधि में..... कोई अन्य नौकरी करता है)' शब्द रखे जाएं।"

मेरा चौथा संशोधन इस प्रकार है:

"कि संशोधन संख्या 3 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 285-ख में 'the President' (राष्ट्रपति)' शब्द के स्थान पर 'the Parliament' (संसद)' शब्द रखा जाये तथा 'the Governor or Ruler' (राज्यपाल या शासक)' शब्दों के स्थान 'State Legislature' (राज्य विधान मण्डल)' शब्द रखे जायें।

यदि इसे स्वीकार कर लिया जाता है तो अनुच्छेद 285-ख का पाठ इस प्रकार होगा:

संघ आयोग अथवा किसी संयुक्त आयोग के मामले में संसद तथा किसी राज्य आयोग के मामले में विधान मण्डल विनियमों द्वारा, इत्यादि।"

डॉ. अम्बेडकर द्वारा सदन में पेश किये गये अनुच्छेद में मेरे यही चार संशोधन हैं।

सभी पक्ष इस बात पर सहमत हैं कि स्थायी सेवायें किसी देश के प्रशासन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हमारे देश के स्वाधीन हो जाने पर सेवाओं के

[श्री एच.वी. कामत]

उत्तरदायित्व अधिक दुर्वह हो गये हैं। सेवायें प्रशासनतन्त्र की कुशलता बढ़ा सकती हैं या उसे समाप्त कर सकती हैं। इस तन्त्र की चाहे हम वैसी ही व्याख्या करें परन्तु यह देश की शान्ति एवं समृद्धि के लिये बहुत महत्व रखता है। देश के शीर्ष पदों पर आसीन लोगों के उत्साह के बावजूद असैनिक सेवाओं की कार्यकुशलता के बिना देश प्रगति नहीं कर सकता। अनुभव यह बताता है कि जहां कहीं भी लोकतान्त्रिक संस्थायें विद्यमान हैं वहां यह आवश्यक है कि लोक सेवाओं को, जहां तक सम्भव हो, राजनीतिक या वैयक्तिक प्रभाव से मुक्त रखा जाये और इनके लिये स्थायित्व एवं सुरक्षा की उस स्थिति की व्यवस्था की जाये जो निष्पक्ष एवं कुशल माध्यम के रूप में इसके सफलतापूर्वक कार्यकरण के लिये अत्यावश्यक है ताकि सरकार-चाहे उसका राजनीतिक स्वरूप कुछ भी हो—अपनी नीतियों को कार्यरूप दे सके। यह नितान्त आवश्यक है कि चाहे जो भी सरकार सत्ता में आये, उस समय पदारूढ़ सरकार द्वारा निर्धारित की जाने वाली नीति को स्थायी सेवायें कार्यरूप दें। जिन देशों में इस सिद्धांत की उपेक्षा की गयी है। और जहां व्यवस्था बिगड़ गयी है वहां निश्चित रूप से सेवा अकुशल एवं असंगठित हुई है और भ्रष्टाचार व्याप्त हुआ है और तत्सम्बन्धी अन्य दुष्परिणाम सामने आये हैं। अत: यह बात महत्वपूर्ण है कि जिन लोक सेवा आयोगों की हम इन अनुच्छेदों के अन्तर्गत परिकल्पना कर रहे हैं वे केन्द्र में अथवा राज्यों में सरकार से पूर्णतया स्वतन्त्र हों। अन्यथा मुझे भय है कि असैनिक सेवाओं के अनुकूल रुख अपनाने से ही उन्हें पदोन्नतियां मिलेंगी, न कि योग्यता या कार्यकुशलता के आधार पर। मैंने प्राय: यह देखा है कि यदि किसी मन्त्री को सचिव ऐसी राय देता है जो उस मन्त्री के लिये रुचिकर नहीं होती तो मन्त्री उसका नाम काली सूची में रख देता है और भावी पदोन्नतियों के लिये उसके बारे में अनुकूल ढंग से विचार नहीं किया जाता। निसन्देह जब एक नीति निर्धारित की जाती है तो सरकारी कर्मचारियों को उसे कार्यरूप देना ही होता है। परन्तु मैं ऐसे उदाहरण जानता हूं कि जिनमें राय मांगी जाने पर जब सचिवों ने मन्त्रियों की नीतियों की आलोचना की तो उन्हें पसन्द नहीं किया गया। यह बहुत ही अवांछनीय है और मैं विश्वास के साथ कह सकता हूं कि ऐसी प्रवृत्ति को प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिये। अत: मैं समझता हूं कि यदि असैनिक कर्मचारियों को ऐसी आशंका हो जाये कि मंत्रियों के दबाव में काम करने से ही उनकी पदोन्नति हो सकती है और कि योग्यता तथा कार्यकुशलता का स्थान गौण है, यदि सिविल कर्मचारियों में ऐसी मनोवृत्ति पनप जाये तो सेवाओं में सभी स्तरों के अधिकारियों का मनोबल गिर सकता है।

मैंने अपना प्रथम संशोधन इसी दृष्टि से पेश किया है। प्रारूप में यह व्यवस्था है कि प्रत्येक आयोग के कम से कम आधे सदस्य ऐसे व्यक्ति होने चाहिए जो या तो भारत सरकार की सेवा में या किसी राज्य सरकार की सेवा में रहे हों। श्री कपूर ने इस संख्या को कम करके न्यूनतम एक-तिहाई रखने के लिये एक संशोधन प्रस्तुत किया है। मेरे संशोधन का उद्देश्य इस संख्या को अधिकतम रखना है। सर्वदा ऐसा होता है कि संख्या बढ़ती चली जाती है और बढ़ते-बढ़ते पूर्ण संख्या का रूप ले लेती है और यदि यह अनुच्छेद पारित कर दिया है तो आयोग के सभी सदस्य ऐसे व्यक्ति नियुक्त होने में कोई बाधा नहीं होगी जो भारत सरकार अथवा किसी राज्य की सरकार के अधीन पद धारण कर चुके होंगे। अत: मैं चाहता हूं कि यह न्यूनतम संख्या अधिकतम होनी चाहिये और किसी भी मामले

में अधिकतम से आगे नहीं बढ़ना चाहिये। यह हम से कम ऐसे लोगों द्वारा इन सेवा आयोगों को दिये जाने वाले महत्व के विरुद्ध एक रक्षोपाय होगा जो सरकारी सेवा में रहे हों और जो इस सरकारी प्रभाव की–मैं सम्पूर्ण छाया तो नहीं कहूंगा परन्तु खण्डछाया से आये हों, जो एक विशिष्ट दुष्चक्र में आ गये हों और जो सत्तारूढ़ सरकार के प्रति विशिष्ट मानसिक दृष्टिकोण द्वारा प्रभावित हो सकते हों। अतः लोक सेवा आयोगों की निष्पक्षता एवं स्वतन्त्रता बनाये रखने के लिये मैंने यह संशोधन पेश किया है। जिसका परिणाम यह होगा कि न्यूनतम आधे कर्मचारियों की संख्या अधिकतम संख्या हो जायेगी और जहां तक सरकार के अधीन पदधारण कर चुके कर्मचारियों का सम्बन्ध है उनकी लोक सेवा आयोगों में संख्या आधे से अधिक किसी मामले में नहीं होगी।

जहां तक मेरे मित्र, श्री कपूर द्वारा कही गयी इस बात का संबंध है कि संघ आयोग और राज्य के आयोगों, दोनों के लिये 65 वर्ष की आयु घटाकर 60 वर्ष कर दी जानी चाहिये, मैं इससे भिन्न राय रखता हूं। मैं समझता हूं कि संघ आयोग और राज्यों के आयोगों दोनों के लिये 65 वर्ष की आयु निर्धारित कर दी जानी चाहिये। हम सब जानते हैं कि अंग्रेजों द्वारा सेवानिवृत्ति की आयु 55 वर्ष निर्धारित की गई थी जो वेतन आयोग की सिफारिश के अनुसार अब बढ़ाकर 58 वर्ष कर दी गयी है; और भारत में, सम्भवतया विश्व के अन्य देशों में भी, सामान्य प्रवृत्ति जीवन-काल बढ़ने की है और युवावस्था अधिक समय तक रहने की है अर्थात बीसवीं शताब्दी के प्रवृत्ति युवावस्था अधिक अवधि तक रहने की है। यद्यपि मैं इस विषय में यह कहने का साहस नहीं करूंगा कि क्या हम बर्नार्ड शॉ के "बैक टु मैथ्यु सोलाह" की ओर जा रहे हैं परन्तु औषध-विज्ञान एवं आहार-विज्ञान की आधुनिक पद्धतियों के कारण संसार भर में आयु दीर्घ हो रही है।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** आहार-विज्ञान परन्तु आहार नहीं।

***श्री एच.वी. कामतः** जी हां। महोदय, यह कौन कह सकता है कि आज जो हमारे नेता हैं–महोदय, जिनमें आप भी शामिल हैं जो साठ वर्ष से अधिक आयु के हैं, वे श्रेय एवं गरिमा के साथ देश के उच्चतम पद को सुशोभित नहीं कर सकते? यदि ऐसा है तो कोई कारण नहीं कि लोक सेवा आयोगों के सभापति पद अथवा सदस्य पद के लिए आयु सीमा 60 वर्ष रखी जाये और सभापति अथवा सदस्यों से कहा जाए कि वे 60 वर्ष की कम आयु में सेवानिवृत्त हो जायें। मैं तो यह चाहूंगा कि दोनों आयोगों के लिये आयु सीमा समान हो और इसे बढ़ाकर 65 वर्ष किया जाये।

मेरा दूसरा संशोधन लगभग शाब्दिक है चूंकि इसका उद्देश्य "कदाचार" या मानसिक या शारीरिक दौर्बल्य शब्दों के स्थान पर 'उपापराध या असमर्थता' शब्द रखने का है। संशोधन के बाद वाले भाग की पहले चर्चा करते हुए मैं सदन का ध्यान भारत के उपराष्ट्रपति को हटाये जाने के विषय में पारित किये गये अनुच्छेद की ओर आमन्त्रित करूंगा। वहां पर "असमर्थता" शब्द का प्रयोग किया गया है और इसका अभिप्राय मन और शरीर से है। "दौर्बल्य" शब्द मैं समझता हूं चिकित्सीय अथवा वैज्ञानिक शब्द है, न कि संवैधानिक शब्द। असमर्थता अधिक उपयुक्त शब्द रहेगा।

[श्री एच.वी. कामत]

जहां तक "कदाचार" शब्द का सम्बन्ध है, यह एक प्रकार से सामान्य बोल-चाल का शब्द है। परन्तु सदन विधि में तथा संवैधानिक विधि में अधिकारियों अथवा, अति विशिष्ट व्यक्तियों के "गम्भीर उपापराध" अभिव्यक्ति से परिचित है। अत: मैं समझता हूं कि इस अनुच्छेद में यहां जो विचार हम व्यक्त करना चाहते हैं वह कदाचार शब्द की अपेक्षा 'उपापराध' शब्द से कहीं अधिक अच्छी तरह व्यक्त होगा। परन्तु यह बात मैं संविधान का प्रारूप तैयार करने में व्यस्त कहीं अधिक बुद्धिमान लोगों पर छोड़ूंगा और मैं तो केवल उनसे अनुरोध करूंगा कि वे इस विषय में उतनी गम्भीरता से विचार करें जितनी गम्भीरता से इस पर विचार किया जाना वांछनीय है।

मेरा तीसरा संशोधन अनुच्छेद 285-क के उप-खण्ड (3) (ख) के सम्बन्ध में है। प्रथमत: यह उपखण्ड हटाये जाने के बारे में है चूंकि मेरा विनम्र विचार है कि यह बात "उपापराध" शब्द में आ जायेगी। कोई व्यक्ति यदि लोक सेवा आयोग का सभापति अथवा सदस्य का पद धारण करते हुए किसी अन्य स्थान पर नियुक्ति लेता है तो निश्चय ही उस पर उपापराध का आरोप लगाया जा सकता है। यदि यह विचार प्रारूप समिति के विशेषज्ञों को स्वीकार्य न हो तो मैं उनसे विनम्र निवेदन करूंगा, और मुझे विश्वास है कि वे महसूस करेंगे, कि ये शब्द 'any body' (किसी की)" कितने अस्पष्ट, बेढंगे और भद्दे हैं। मेरी समझ में यह बात नहीं आई कि डॉ. अम्बेडकर अंग्रेजी भाषा का गहन ज्ञान रखते हुये भी इतने अस्पष्ट शब्दों का प्रयोग कैसे कर गए। मुझे किसी भी संवैधानिक पुस्तक में "any body's employment (किसी की नौकरी)" जैसे भद्दे शब्द नहीं मिले। मैं समझता हूं कि "any other employment (कोई अन्य नौकरी)" शब्दों से यह विचार कहीं अधिक उपयुक्त ढंग से व्यक्त होगा। इसके अतिरिक्त, अंग्रेजी भाषा के अपने अल्प ज्ञान के अनुसार मैं कह सकता हूं कि "engaging in an employment अभिव्यक्ति पूरी तरह सही नहीं है। आप नौकरी कर सकते हैं—यद्यपि मैं इस विषय में अपने संशोधन से भी पूरी तरह सन्तुष्ट नहीं हूं—परन्तु सामान्यतया आप कोई कार्य या सेवा करते हैं, परन्तु यह "engaging in an employment" कहना न तो शुद्ध अंग्रेजी भाषा है और न ही संवैधानिक भाषा। मुझे आशा है कि प्रारूप समिति के बुद्धिमान सदस्यों का ध्यान इस ओर भी जाएगा और जब वह अनुच्छेद अंतिम रूप में सदन के समक्ष जायेगा तो उसमें उन्होंने अपने विचार उपयुक्त भाषा में व्यक्त किये हुए होंगे।

मेरा अन्तिम संशोधन संख्या 4 सारगर्भित संशोधन है। इसका परिणाम यह होगा कि आयोगों के सदस्यों एवं कर्मचारियों की सेवा की शर्तों के विनियमन की शक्ति राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल अथवा शासक के पास रहने की बजाए संसद और राज्य विधानमण्डलों में निहित होगी। मैं सदन से निवेदन करूंगा कि वह एक क्षण के लिए प्रारूप संविधान की अवस्था में अनुच्छेद 285 के मूल प्रारूप को देखें। सदन मूल अनुच्छेद 285 के खंड (2) को देखें। इसमें उपबन्ध है कि न केवल आयोग के सदस्यों की संख्या को प्रभावित करने वाले मामलों सम्बन्धी शक्तियां अपितु उनकी पदावधि, उनकी सेवा की शर्तों और आयोग के कर्मचारियों की संख्या के निर्धारण सम्बन्धी शक्तियां भी राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल में निहित होंगी। सदन देखेगा कि जिस रूप में यह प्रारूप हमारे समक्ष आज आया है और जिस रूप में यह मूल रूप में था उसमें कितना अंतर है। पदावधि निर्धारण सम्बन्धी शक्ति राष्ट्रपति

और राज्यपाल के अधिकार क्षेत्र से निकाल दी गयी है। अनुच्छेद 285 में हमने तीन आयोगों–संघ आयोग, राज्यों के आयोगों अथवा संयुक्त आयोगों—के सदस्यों की पदावधि के लिए उपबन्ध किया है। अनुच्छेद 285 का खण्ड (2) इसी विषय में है। इसका अर्थ यह है कि प्रारूप समिति ने इस विषय को, अर्थात् पदावधि के विषय को संविधान सभा के समक्ष पाने की आश्यकता महसूस की है। मैं चाहता हूं कि आयोगों के सदस्यों की संख्या से सम्बन्धित विषय और उनकी सेवाओं की शर्तें इन विषयों से सम्बन्धित विनियम आवश्यक रूप से या तो संसद पर या राज्य विधान-मण्डलों पर छोड़ दी जानी चाहिये। मैं इस प्रस्ताव पर एक क्षण के लिये भी आपत्ति नहीं करता कि नियुक्तियां राज्यपाल अथवा राष्ट्रपति द्वारा यदि आवश्यक हो तो, विभिन्न लोक सेवा आयोगों के अध्यक्षों के परामर्श से की जानी चाहिये। परन्तु जहां तक इन मामलों का सम्बन्ध है, अर्थात कि आयोग के कितने सदस्य हों, उनकी और उनके कर्मचारियों की सेवा की शर्तें क्या हों—निस्सन्देह संसद इन व्यक्तियों की नियुक्ति नहीं कर सकती—इन मामलों पर विचार करना और निर्णय करना निश्चय ही संसद अथवा विधान मंडलों पर छोड़ दिया जाना चाहिये। संसद द्वारा इस बारे में नियम बनाये जाने के पश्चात्, तद्नुसार नियुक्तियां करने के लिये राज्यपालों अथवा राष्ट्रपति से कहा जाना चाहिये। मैं समझता हूं कि जब तक इन आयोगों के सदस्यों को पूरा विश्वास नहीं हो जाता कि उनकी पूरी पदावधि के दौरान उनकी सेवा की शर्तें सुरक्षित रहेंगी और कार्यपालिका के प्रभाव से पूर्णतया मुक्त रहेंगी तब तक वे जी-जान से कम नहीं करेंगे और दिन-प्रतिदिन अपने सामने आने वाली समस्याओं में वे उतनी गहन रुचि नहीं लेंगे जो उनके सार्वजनिक कृत्यों के कुशल निर्वहन के लिये नितान्त आवश्यक है।

मूझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि अनुच्छेद 285-ग के मूल प्रारूप में सुधार करके इसे पेश किया गया है। मूल प्रारूप में यह अनुच्छेद 285 का खण्ड (3) था। जहां तक पद-धारण समाप्त होने पर आयोगों के सदस्यों की नियुक्ति पर रोक का सम्बन्ध है उसमें राष्ट्रपति और राज्यों के राज्यपालों द्वारा कुछ छूटों का उपबन्ध था। यह बहुत हितकर ही नहीं अपितु नितान्त आवश्यक भी है कि इन आयोगों के सदस्य भारत सरकार अथवा किसी राज्य सरकार के अधीन किसी भी पद के लिए पात्र नहीं होने चाहिये। पुराने भारत शासन अधिनियम में यह उपबन्ध था कि गवर्नर-जनरल, जहां वह आवश्यक अथवा उपयुक्त समझे, इस विषय में छूट दे सकता है। परन्तु मैं समझता हूं कि ऐसे मामलों में, जहां इसकी कदापि कोई आवश्यकता नहीं थी गवर्नर-जनरल के माध्यम से इस शक्ति का प्रयोग न करना बहुत ही बुद्धिमत्ता की बात थी। एक मास पूर्व, हम में से कुछ लोग तो यह जानकर उत्तेजित हो गये थे कि बम्बई लोक सेवा आयोग के एक सदस्य को राजदूत के पद पर नियुक्त किया गया है। मैं उस व्यक्ति के नाम का उल्लेख नहीं करना चाहता। उस व्यक्ति का अपना पदत्याग करने से पूर्व ही राजदूत के पद पर नियुक्त कर दिया गया था और जब वह नियुक्त हो गया तो स्वाभाविक है कि उसने अपने पहले पद का त्याग किया। परन्तु यदि आप सेवाओं को सुदृढ़ एवं कुशल बनाना चाहते हैं तो इस प्रकार की अनियमितता का समर्थन कदापि नहीं किया जाना चाहिये जिससे भाई-भतीजावाद की तथा वैयक्तिक पक्षपात की गन्ध आती हो। यदि लोक सेवा आयोग के किसी सदस्य की यह धारणा को कि वह सत्तारूढ़ लोगों का दास बनकर और उनके तलवे चाटकर भारत सरकार अथवा किसी राज्य की सरकार के अधीन लाभ का पद प्राप्त कर सकता है, तो मैं विश्वास के साथ कह सकता हूं कि ऐसा व्यक्ति निष्पक्षता अथवा सत्यनिष्ठा से अपने कृत्यों का

[श्री एच.वी. कामत]

निर्वहन नहीं कर सकेगा। यह नियुक्ति जो हाल ही में की गयी है, सिद्धांत रूप से गलत थी और मुझे विश्वास है कि यद्यपि गवर्नर-जनरल ने इसके लिये अपनी स्वीकृति अवश्य प्रदान की होगी तथापि यही एक कारण नहीं है कि उस व्यक्ति विशेष को ही इतना आवश्यक क्यों माना गया कि लोक सेवा आयोग के सदस्यों की नियुक्ति पर रोक विषयक हितकर नियम की ही उपेक्षा कर दी गयी। तथापि, मुझे प्रसन्नता है कि अनुच्छेद के वर्तमान प्रारूप में इस प्रकार की छूटों की व्यवस्था नहीं की गयी है और लोक सेवा आयोग के सदस्य अथवा सभापति पदासीन नहीं रहने के पश्चात् भारत सरकार अथवा किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी नियुक्ति के लिये पात्र नहीं होंगे।

अन्त में मैं यही कहना चाहूंगा कि संसार के अधिकांश लोकतान्त्रिक देशों ने लोक सेवा आयोग स्थापित किये हैं ताकि भर्ती के मामलों को भाई-भतीजावाद अथवा पक्षपात और राजनीतिक संरक्षण से मुक्त रखा जा सके और मन्त्रियों को इस आरोप से बचाया जा सके—यह आरोप निराधार अथवा गलत भी हो सकता है—कि वे अपने परिवार अथवा ग्रुप के हितों को बढ़ावा देने के लिए अपनी स्थिति से लाभ उठाते हैं। यहां के लोगों को कभी-कभी यह महसूस कराया गया है कि राष्ट्रीय हितों की कीमत पर परिवार अथवा ग्रुप के हितों को बढ़ावा दिया है और ऐसे आरोप से मंत्रियों को बचाने के लिए यह आवश्यक है कि लोक सेवा आयोगों को कार्यपालिका से पूर्णतया स्वतन्त्र रखा जाये और इसके अतिरिक्त यह भी कि भर्ती के विषय में इन आयोगों द्वारा की गयी सिफारिशें साधारणतया कार्यान्वित अवश्य की जायें और ऐसे प्रत्येक मामले में जहां सरकार अथवा कोई मन्त्री लोक सेवा आयोगों की सिफारिशों के प्रतिकूल कोई नियुक्ति करे तो उसे अनिवार्यत: लिखित रूप में इस बात के पर्याप्त कारण बताने चाहिये कि उसने आयोग की सिफारिशों की उपेक्षा क्यों की।

पिछले दो वर्षों में ऐसी घटनायें हुई हैं और मन्त्रियों से विधानमंडल में प्रश्न किये गये हैं कि फेडरल लोक सेवा आयोग की सिफारिशों के प्रतिकूल कतिपय व्यक्तियों की नियुक्तियां क्यों की गयीं। मेरे विचार में उनके उत्तर असन्तोषजनक थे और अनेक ईमानदार लोगों के मन में गम्भीर सन्देह उत्पन्न हुए कि मंत्री फेडरल लोक सेवा आयोग की सिफारिशों की ओर ध्यान न देते हुए नियुक्तियां करने के लिये अपनी सीमा से बाहर क्यों गये। मुझे आशा है कि हमारे देश में जो नयी व्यवस्था स्थापित हो रही है उसमें ऐसी बात नहीं होगी, जो कि हमारे यहां बेहतर और स्वच्छ प्रबंध होगा और यह कि केन्द्र एवं राज्य, दोनों में लोक सेवा आयोग इस ढंग से कार्य करेंगे कि प्रथमत: इन आयोगों के सदस्य अपने समय की सरकारों के प्रभाव से पूर्णतया मूक रहकर निष्पक्षता, सत्यनिष्ठा एवं बुद्धिमता से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करेंगे और दूसरे, सेवाओं में ऐसे व्यक्ति नियुक्त किये जायेंगे जो कार्यकुशलता एवं राज्य की प्रशासनिक स्वच्छता की कीमत पर मंत्रियों के दबाव में नहीं आ सकेंगे अथवा मंत्रियों के संरक्षण का सहारा नहीं लेंगे।

(श्री कुलाधर चालिहा ने अपना संशोधन पेश नहीं किया)

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधनों में संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 3 में,

प्रस्तावित अनुच्छेद 285-क के खंड (ख) में, "body's" शब्द निकाल दिया जाये।"

मेरा संशोधन मेरे मित्र, श्री कामत द्वारा पेश किये गये संशोधनों से कुछ मिलता-जुलता है। उन्होंने ठीक ही कहा कि इसकी शब्दावली बहुत त्रुटिपूर्ण है और यदि इसमें ऐसा सुधार करना है जो डॉ. अम्बेडकर को स्वीकार्य हो तो मैं समझता हूं कि "body's" शब्द को निकाल दिये जाने से इसमें काफी सुधार हो जायेगा। परंतु यदि डॉ. अम्बेडकर सहमत हों तो मुझे अपने मित्र, श्री कामत का संशोधन स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होगी।

जहां एक समूचे अनुच्छेद का संबंध है, मैं श्री जसपत राय कपूर द्वारा पेश किये गये संशोधन का जोरदार समर्थन करना चाहूंगा, विशेषकर पहले संशोधन का जो आयोगों में सरकारी कर्मचारियों की संख्या के बजाय आधे के एक-तिहाई तक सीमित करने के विषय में है। मैं चाहता कि यदि संभव होता तो आप मुझे समूचे उपबंध को हटाने के लिये संशोधन पेश करने की अनुमति देते। यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि किसी ने यह नहीं सोचा कि इस परंतुक के अर्थ क्या हैं। मुझे आशा नहीं है कि महोदय, आप इनमें से किसी आयोग का यहां तक कि संघ आयोग का भी सभापति पद धारण करने के लिए तैयार होंगें। परंतु यदि संयोग से आप तैयार हो जाएं तो महोदय, आप जैसा व्यक्ति भी जिसने देश के स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया है, जहां तक कि इस उपबंध के आधे भाग का संबंध है, आयोग में नियुक्ति का पात्र नहीं होगा।

आयोगों में वही व्यक्ति नियुक्त हो सकेगा जो दस वर्ष तक सरकारी सेवा कर चुके हों। इसका अर्थ यह है कि केवल पुराने कर्मचारियों को ही नियुक्त किया जा सकेगा और उन सब व्यक्तियों को जो वर्तमान स्वतंत्र भारत की सरकार द्वारा नियुक्त किये गये हैं 1957 तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी और उसके पश्चात् ही वे इन परिरक्षित आये पदों पर नियुक्ति के लिये पात्र होंगे। यदि हम आयोग की आधी सदस्य संख्या पुराने लोगों के लिये इस प्रकार परिरक्षित करने जा रहे हैं इससे उन लोगों को ही निश्चित लाभ होगा जिन्होंने देश के हितों के विरुद्ध ब्रिटेन की सरकार की सेवा की और ब्रिटेन के हित में देश को दासता की जंजीरों में डाला। यह एक आपत्तिजनक उपबंध है और मैं नहीं समझता कि कोई कांग्रेसी इसे इसी रूप में रहने देना चाहेगा जिससे कि देशभक्त उस निकाय के आधे पदों के लिए पात्र नहीं हो। ये लोग भी जिन्होंने केवल देशभक्ति की भावना को लेकर सरकारी सेवाओं में प्रवेश करने से इंकार कर दिया था, आयोग के आधे पदों में प्रवेश पाने से वंचित रह जायेंगे। अब इस स्थिति के निवारण के लिय यही संभव उपाय है कि श्री कपूर के संशोधन को स्वीकार कर लिया जाये, यद्यपि मैं समझता हूं कि सदन मुझसे इस बात पर सहमत होगा कि यह समूचा परंतुक ही हटा दिया जाना चाहिये।

यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि भारत के वर्तमान शासक स्थायी सेवाओं से इतना अधिक स्नेह रखते हैं। राजदूतों के पदों पर तो वास्तव में उन गैर-सरकारी कार्यकताओं और नेताओं को नियुक्त किया जाना चाहिये जिन्होंने देश के हित में अपने हितों का त्याग किया है परन्तु उनमें से किसी को भी योग्य नहीं समझा गया। प्रशासन के विषय में हमारे अलग-अलग विचार और आदर्श हो सकते हैं, परन्तु यह बात बिल्कुल गलत है कि ऐसे अधिक से अधिक पदों पर ऐसे व्यक्तियों

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

को नियुक्त किया जाये जिनके हृदय में जब समय आया तो देश का हित नहीं रहा और मैं समझता हूं कि कोई कारण नहीं है कि इस बात पर आग्रह न किया जाये कि इस नीति में और हमारे वर्तमान शासकों को प्रेरित करने वाले आदर्शों में परिवर्तन किया जाना चाहिये। सदन को बिना पर्याप्त विचार के अनुच्छेद पारित करते हुये अधिक सावधान रहना चाहिये। यह उपबंध हमारी विगतकालीन दासता की परछायी है जिसे इस अनुच्छेद से हटा दिया जाना चाहिये।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा: जनरल): महोदय, प्रारूप संविधान में तीन साधनों का उपबंध किया गया है जिनके द्वारा हमारे प्रशासन की सत्यनिष्ठा बनाये रखी जायेगी। पहला है उच्चतम न्यायालय तथा भारत का मुख्य न्यायाधीश, दूसरा और महालेखापरीक्षक जो हमारी वित्तीय व्यवस्थाओं, व्यय तथा कर-संग्रह व्यवस्था को बनाये रखेगा और तीसरा है फेडरल लोक सेवा ओयाग जो हमारी सेवाओं के स्वच्छ एवं सत्यनिष्ठ स्वरूप को बनाये रखेगा। अन्य सदस्य पहले ही यह विचार व्यक्त कर चुके हैं कि विगत काल में अपनी वफादारी के कारण लोग लोक सेवा आयोगों के सदस्य बने हैं। वे योग्यता के आधार पर नहीं वरन् विगत काल में देश के शासकों के प्रति वफादारी के आधार पर इन पदों पर आसीन हुये हैं। अनुच्छेद 285 के उपबंधों और अनुच्छेद 286 में निर्धारित कर्तव्यों के परिणामस्वरूप गृह मंत्रालय तथा गृह मंत्री के लिये भी पक्षपात करना संभव नहीं है।

इसमें एक उपबंध ऐसा है जो मैं ठीक नहीं समझता। जिस व्यक्ति ने दस वर्षों तक सरकारी सेवा कर ली हो, वही फेडरल लोक सेवा आयोग का सदस्य बन सकता है। इसका अर्थ यह है कि यदि उसने 25 वर्ष की आयु में सरकारी सेवा में प्रवेश किया हो तो वह तीस वर्षों तक रहेगा। उस अवधि में वह व्यक्ति निष्क्रिय या असमर्थ भी हो सकता है और ऐसी स्थिति में उसकी अनुपयोगिता संसद सदस्यों को सिद्ध करनी होगी और फेडरल लोक सेवा आयोग के उस सदस्य को बर्खास्त करने के लिये सदन में संकल्प पेश करना होगा। मैंने यह देखा है कि प्रारूप संविधान में 35 वर्ष की आयु जो विशेष महत्व दिया गया है। चाहे राज्यपाल हो या गवर्नर-जनरल या उच्च न्यायालय का न्यायाधीश या उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश या फेडरल लोक सेवा आयोग के सदस्य हों, आयु 35 वर्ष की होनी चाहिये।

जहां तक मेरा संबंध है, मैं अपने माननीय मित्र की जसपत राय कपूर के विचार का समर्थन करूंगा कि फेडरल लोक सेवा आयोग के केवल एक-तिहाई सदस्य सरकारी अधिकारी होने चाहिये। नियम तो यह है कि 50 प्रतिशत सदस्य सरकारी होने चाहिये, परंतु जहां तक मैं जानता हूं इस समय फेडरल लोक सेवा आयोग के अधिकांश सदस्य सरकारी अधिकारी हैं। मेरे मित्र डॉ. देशमुख ने कहा कि वे आगामी छः वर्षों तक कार्यरत रहेंगे। मुझे आशा है कि इस संविधान के प्रख्यापन के समय इस हेतु कदम उठाये जायेंगे कि फेडरल लोक सेवा आयोग के सदस्यों के केवल 33 अथवा 50 प्रतिशत पदों पर ही सरकारी अधिकारी नियुक्त किये जाएं और शेष पदों पर अन्य व्यक्तियों को नियुक्त किया जाये। साथ ही किसी न्यायालय का न्यायाधीश या कोई अत्यन्त उच्च अधिकारी, या चाहे राष्ट्रपति या गवर्नर-जनरल ही इस बात की जांच करे कि वे लोग फेडरल लोक सेवा आयोग

में किस आधार पर नियुक्त किये गये हैं, कि क्या वे पक्षपात द्वारा नियुक्त किये गये हैं अथवा क्या वे प्रारूप संविधान के अनुसार उच्च अधिकारियों की नियुक्ति संबंधी नियमों एवं शर्तों पर ठीक उतरते हैं और आगामी पांच या छः वर्षों के लिये फेडरल लोक सेवा आयोग के सदस्य बने रहने के योग्य हैं।

एक बुरी परंपरा तो है ही और वह है भाई-भतीजावाद की परम्परा। गृह विभाग ने विगत काल में फेडरल लोक सेवा आयोग की सिफारिशों की अवहेलना की है। जहां तक मुझे ज्ञात है, गृह मंत्रालय ने भर्ती के नये नियम बनाये हैं जिनके अनुसार फेडरल लोक सेवा आयोग की सिफारिशों को अनिवार्यतः स्वीकार करना होगा। यह बात गवर्नर-जनरल और राष्ट्रपति को सुनिश्चित करनी होगी कि फेडरल लोक सेवा आयोग की सिफारिशें वैसे की वैसी ही स्वीकार की जायें। हम जानते हैं कि इस समय भारत सरकार के अधीन जो काम करते हैं किसी की पत्नी के भाई हैं या साली के चचेरे या मौसेरे भाई हैं या इस प्रकार के संबंधी हैं। इस प्रकार का भाई-भतीजावाद समाप्त होना चाहिये और प्रशासन में ईमानदारी और देश सुरक्षा बनाये रखने के लिये केवल वही लोग भर्ती किये जाने चाहिये जिनकी फेडरल लोक सेवा आयोग द्वारा सिफारिश की जाये—यह आयोग नहीं जो आज है, अपितु वह आयोग जो 26 जनवरी, 1950 के पश्चात् पुनर्गठित किया जायेगा।

मुझे आशा है कि अनुच्छेद 285 अथवा 286 के वावजूद हमारे लिये कुछ वृद्ध सेवानिवृत्त लोगों को सेवा में बनाये रखने के प्रश्न पर विचार करना संभव होगा जो योग्यता के आधार पर नहीं वरन् जीवन के अन्य क्षेत्रों में वफादारी के आधार पर साम्प्रदायिक अथवा किसी अन्य आधार पर फेडरल लोक सेवा आयोग के सदस्य नियुक्त हुये हैं। उन्हें हटा दिया जाना चाहिये ऐसा किये बिना यह संविधान असफल ही सिद्ध होगा।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मैं बोलना चाहता हूं। आपने कहा था कि आप मुझे बोलने की अनुमति देंगे।

***अध्यक्षः** मैं इस पर आज चर्चा समाप्त करना चाहता हूं। एक बजने में केवल पांच मिनट शेष हैं, अतः अब समय ही नहीं है। लोक सेवा आयोग के विषय में कुछ अन्य अनुच्छेद हैं और आपको अगले अनुच्छेद पर चर्चा के दौरान बोलने का अवसर मिलेगा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** अध्यक्ष महोदय, सदन में जो अनुच्छेद मैंने पेश किये हैं उनकी आलोचना के उत्तर में केवल कुछ प्रश्नों पर मैं एक या दो शब्द कहना चाहूंगा।

सर्वप्रथम, आलोचना लोक सेवा आयोग की रचना के संबंध में की गई है। यह जो आरक्षण किया गया है कि लोक सेवा आयोग के कम से कम आधे सदस्य ऐसे होंगे तो भारत के सम्राट के कर्मचारी रहे हों। इस पर इस आधार पर आपत्ति की गयी है कि यह वास्तव में भारतीय सिविल सेवा के अधिकारियों के लिये एक स्वर्ग बनाया गया है। मुझे खेद है कि जिन सदस्यों ने यह आलोचना की है, ऐसा लगता है कि वे लोक सेवा आयोग के उद्देश्य, इसकी सार्थकता तथा इसके कृत्यों को समझ ही नहीं पाये हैं। लोक सेवा आयोग का कृत्य ऐसे लोगों का चयन करना है जो सार्वजनिक सेवा के लिये योग्य हों। योग्यता के प्रश्न पर निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए जो समझ-बूझ चाहिये। उसके लिये यह आवश्यक है कि

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

जिस व्यक्ति जो ऐसा निर्णय करने के लिये कहा जाता है उसे कुछ अनुभव हो। यह स्पष्ट है कि इस मामले में उस व्यक्ति से बेहतर निर्णय करने वाला कोई नहीं हो सकता जो पहले से भारत के सम्राट की सेवा में रह चुका है। अतः सेवा में रह चुके व्यक्तियों के लिये कुछ अनुपात में पद आरक्षित करने का यह कारण नहीं है कि जो व्यक्ति पहले से भारत के सम्राट की सेवा में है उन्हें खुश किया जाये, अपितु उद्देश्य यह है कि आवश्यक अनुभव प्राप्त व्यक्ति लिये जायें जो यथासंभव अच्छे से अच्छे ढंग से अपने कर्तव्यों का निर्वहन कर सकें। तथापि, यदि मेरे मित्र, श्री कपूर तैयार हों तो मैं एक संशोधन करने के लिये तैयार हूं। मैं "परंतु यह कि कम से कम आधे" शब्दों के स्थान पर "परंतु यह कि निकटतम आधे" शब्दों का प्रयोग करने के लिये तैयार हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** यह उपबंध क्यों नहीं हैं कि "आधे से अनधिक?"

***माननीय श्री बी.आर. अम्बेडकरः** जी नहीं, जो मैं कर सकता था वह मैंने कर दिया।

जहां तक दूसरे प्रश्न का संबंध है कि जो व्यक्ति लोक सेवा आयोग की सेवा में रह चुके हों, उन्हें राज्य के अधीन अवैतनिक पद स्वीकार करने की अनुमति प्रदान की जानी चाहिये, व्यक्तिगत रूप से अब मैं इस सुझाव को स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं हूं। हमारा मुख्य उद्देश्य यह है कि लोक सेवा आयोग के सदस्यों को कार्यपालिका के प्रभाव से मुक्त रखा जाये। कार्यपालिका के प्रभाव से मुक्त रखने का एक तरीका यह है कि उन्हें ऐसे पद से वंचित रखा जाये जिसका लालच देकर कार्यपालिका उन्हें अपने कर्तव्य से विमुख होने के लिये प्रेरित कर सकती है। यह पूर्णतया सही है कि जो पद लाभ का पद नहीं है वरन् अवैतनिक पद है उसमें वेतन का प्रश्न नहीं होता परंतु जैसा कि सब जानते हैं कि किसी पद पर नियुक्त होने से किसी व्यक्ति को उसके पद के कारण केवल वेतन ही प्राप्त नहीं होता। वेतन के अतिरिक्त अन्य प्रकार के लाभ भी होते हैं। परन्तु यदि अन्य लाभ न भी हों तो भी किसी पद पर आसीन होने से प्रभाव का उपयोग तो हो ही सकता है। और मैं समझता हूं कि यह वांछनीय है कि किसी व्यक्ति की किसी ऐसे पद पर नियुक्ति की संभावना भी न रहे जहां उसे वेतन भले ही न मिले परंतु प्रभाव डालने का अधिकार मिल सकता हो।

अब मैं अपने मित्र, श्री कुंजरू के संशोधन पर आता हूं। मैं उनसे पूर्णतया सहमत हूं कि लोक सेवा आयोग के अधीन नियोजित होने वाली सेवाओं तथा उच्च न्यायालय, उच्चतम न्यायालय और महालेखा परीक्षक के अधीन नियोजित होने वाली सेवाओं के बीच स्पष्टतया भेद किया जाता है। मैं बताना चाहूंगा कि हमने यह भेद क्यों किया है। जहां तक उच्च न्यायालय तथा उच्चतम न्यायालय के कर्मचारीवृन्द का संबंध है, जो अधिकारी उच्चतम पदों पर आसीन हैं कम से कम उन्हें कुछ न्यायिक विवेकाधिकार का प्रयोग करना होता है। परिणामतः हमने महसूस किया कि न केवल उनके वेतन तथा पेंशन मुख्य न्यायाधीश द्वारा राष्ट्रपति के अनुमोदन से निर्धारित किये जाने चाहिये अपितु उनकी सेवा की शर्तें भी मुख्य न्यायाधीश द्वारा निर्धारित की जानी चाहिये। लोक सेवा आयोग के मामले में अधिकांश कर्मचारीवृन्द का संबंध केवल "मंत्रालयी कर्तव्यों" से होगा जहां कोई प्राधिकार नहीं होता और न ही विवेकाधिकार ही होता है। यही कारण है कि हमने इनमें भेद किया है। परंतु मैं अच्छी प्रकार समझता हूं कि मेरा तर्क संभवतया इतना ठोस

नहीं है जितना कि दिखाई पड़ता है फिर भी मैं अपने माननीय मित्र, पंडित कुंजरू को सुझाव दूंगा कि वह इस अनुच्छेद को मेरे इस वचन पर पारित होने दें कि यदि बाद में मैंने महसूस किया कि इसमें परिवर्तन करना आवश्यक है तो मैं आवश्यक संशोधन लेकर सदन के समक्ष आऊंगा।

महोदय, मेरा ध्यान अनुच्छेद 285-क में मेरे संशोधन की साइक्लोस्टाइल की गई प्रति में इस तथ्य की ओर दिलाया गया है कि उप-खंड (3) ख में "in any paid employment" शब्द होने चाहिये थे। वे गलती से "in any body's employment" टाइप हो गये हैं। मुझे आशा है कि यह शुद्धि करा दी जायेगी।

जैसा कि मैंने पंडित कुंजरू से कहा, प्रारूप समिति इस मामले पर विचार करेगी और यदि उसका विचार बना कि कोई परिवर्तन करने के लिये कारण है तो वह सदन की अनुमति से संशोधन पेश करेगी ताकि स्थिति सही हो जाये।

***अध्यक्ष:** अब पहले मैं संशोधनों को मतदान के लिये रखूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 3 में प्रस्तावित अनुच्छेद 285 के खंड (1) के परंतुक में 'one half (आधे)' शब्द के स्थान पर 'one third (एक तिहाई)' शब्द रखे जायें।"

***श्री जसपतराय कपूर:** इस संशोधन के स्थान में मैं "निकटतम आधे" शब्द रखने के डॉ. अम्बेडकर के सुझाव को स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्ष:** तब मैं उसे मतदान के लिये रखूंगा। प्रश्न यह है:

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 3 में प्रस्तावित अनुच्छेद 285 के खंड (1) के परंतुक में 'at least one half (कम से कम आधे)' शब्द के स्थान पर 'as nearly as may be one half (यथाशक्य निकटतम आधे)' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री जसपतराय कपूर:** मैं सदन से अपना संशोधन संख्या 5 वापस लेने की अनुमति चाहता हूं।

संशोधन सभा की अनुमति से, वापस लिया गया।

***श्री जसपतराय कपूर:** मैं सदन से अपना संशोधन संख्या 6 वापस लेने की अनुमति चाहता हूं।

संशोधन सभा की अनुमति से, वापस लिया गया।

***श्री जसपतराय कपूर:** मैंने अपने संशोधन संख्या 10 और 11 तथा वह संशोधन भी जिसकी सूचना मैंने आज प्रात: दी थी, वापस लेने की अनुमति ली है।

***अध्यक्ष:** वे अनुच्छेद 285-ख के संबंध में हैं जिस पर अभी हम आये नहीं हैं। श्री कामत का संशोधन संख्या 1 निरर्थक हो जाता है चूंकि "यथाशक्य निकटतम आधे" शब्द जोड़ने का संशोधन स्वीकार कर लिया गया है।

***श्री एच.वी. कामत:** यदि आप इसे निरर्थक हुआ मानते हैं तो मुझे कुछ नहीं कहना है।

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद 285 में अन्य कोई संशोधन नहीं है।

प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 285, संशोधित रूप में संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 285, संशोधित रूप में संविधान में जोड़ दिया गया।

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 285-क पर आते हैं। पहला संशोधन संख्या 69 श्री नज़ीरुद्दीन अहमद का है।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों में संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 3 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 285-क के खंड (1) में, 'shall only be removed from office by order of the President on ground of misbehaviour (केवल राष्ट्रपति द्वारा कदाचार के आधार पर दिये गये उस आदेश पर ही हटाया जायेगा)" शब्दों के स्थान पर 'may be removed from office by order of the President only on ground of misbehaviour (राष्ट्रपति द्वारा केवल कदाचार के आधार पर दिये गये उस आदेश पर हटाया जा सकेगा)" शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** श्री कामत का संशोधन संख्या 2 प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 3 में प्रस्तावित अनुच्छेद 285-क के खंड (1) में, 'misbehaviour or infirmity of mind or body (कदाचार के या मानसिक या शारीरिक दौर्बल्य के)' शब्दों के स्थान पर 'misdemeanour or incapacity (उपापराध या असमर्थता)' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** श्री कामत का संशोधन संख्या 3 प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 3 में प्रस्तावित अनुच्छेद 285-क के खंड 3 के उप-खंड (ख) को निकाल दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** श्री कामत का अगला संशोधन। प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 3 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 285-क के उप-खंड 3(ख) में, 'engages during his term of office in anybody's employment (अपनी पदावधि में..... किसी की नौकरी करता है)' शब्दों के स्थान पर 'takes up during his term of office any other employment (अपनी पदावधि में..... कोई अन्य नौकरी करता है)' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अगला संशोधन डॉ. देशमुख का है। यह अब निरर्थक हो गया है, चूंकि वे शब्द ही वहां नहीं हैं।

अब मैं अनुच्छेद 285-क मतदान के लिये रखूंगा। सदस्यों को स्मरण रहे कि उप-खंड 3 (b) में 'in any paid employment (कोई वैतनिक नौकरी करता है)' के स्थान पर 'in anybody's employment (किसी की नौकरी करता है)' शब्द गलत छप गये हैं।

प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 285-क संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 285-क संविधान में जोड़ दिया गया।

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 285-ख पर आते हैं। मैं संशोधन संख्या 9 मतदान के लिये रखूंगा।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** महोदय, डॉ. अम्बेडकर द्वारा दिये गये आश्वासन को देखते हुये मैं नहीं चाहता कि मेरा संशोधन मतदान के लिये रखा जाये।

संशोधन, सभा की अनुमति से वापस लिया गया।

***श्री जसपतराय कपूर:** महोदय, मैं अपना संशोधन संख्या 10 वापस लेने के लिये सभा की अनुमति चाहता हूं।

संशोधन, सभा की अनुमति से वापस लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं श्री कामत का संशोधन संख्या 4 सभा के मतदान के लिये रखूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधन संख्या 3 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 285-ख में 'the President (राष्ट्रपति)' शब्द के स्थान पर 'the Parliament (संसद)' शब्द रखा जाये तथा 'the Governor or Ruler (राज्यपाल या शासक)' शब्दों के स्थान पर 'State Legislatures (राज्य विधान मंडल)' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 285-ख संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 285-ख संविधान में जोड़ दिया गया।

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 285-ग को लेते हैं।

संशोधन संख्या 11

***श्री जसपतराय कपूर:** मैं इसे वापस लेने के लिये सभा की अनुमति चाहता हूं।

संशोधन, सभा की अनुमति से वापस लिया गया।

***अध्यक्ष:** श्री जसपत राय कपूर का एक अन्य संशोधन भी है।

***श्री जसपतराय कपूर:** मैं उस संशोधन को भी वापस लेने के लिये सभा की अनुमति चाहता हूं।

संशोधन, सभा की अनुमति से वापस लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 285-ग संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 285-ग संविधान में जोड़ दिया गया।

***अध्यक्ष:** अब सदन कल प्रात: 8 बजे तक के लिये स्थगित होगा।

उसके पश्चात् सभा मंगलवार, 23 अगस्त, 1949 को नौ बजे तक के लिये स्थगित हुई।